## अध्याय : एक

## साहित्य अकादमी पुरस्कृत हिंदी उपन्यासकारों के उपन्यासों का परिचयात्मक सर्वेक्षण

आजादी से पूर्व ही ब्रिटिश सरकार ने भारत में एक राष्ट्रीय संस्था बनाने पर विचार किया था। भारत सरकार ने 1944 ई. में रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑफ़ बंगाल का प्रस्ताव सैद्धांतिक रूप से स्वीकार कर लिया था| इनका मानना था कि इसका गठन इसलिए किया जाना चाहिए ताकि राष्ट्रीय सांस्कृतिक ट्रस्ट द्वारा सांस्कृतिक गतिविधि के हर क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जा सके| अतः आजाद भारत में 12 मार्च 1954 ई. को भारत सरकार द्वारा साहित्य अकादमी का औपचारिक उद्घाटन किया गया। भारत सरकार के जिस प्रस्ताव में अकादमी का यह विधान निरूपित किया गया था, उसमें अकादमी की यह परिभाषा दी गई है - "भारतीय साहित्य के सक्रिय विकास के लिए कार्य करने वाली एक राष्ट्रीय संस्था, जिसका उद्देश्य उच्च साहित्यिक मानदंड स्थापित करना, भारतीय भाषाओं में साहित्यिक गतिविधियों को समन्वित करना एवं उनका पोषण करना तथा उनके माध्यम से देश की सांस्कृतिक एकता का उन्नयन करना होगा|"[1] साथ ही अकादमी की स्थापना सरकार द्वारा जरूर की गई लेकिन यह एक स्वायत्तशासी संस्था के रूप में कार्यरत है|

भारत की 'नेशनल एकेडमी ऑफ़ लेटर्स' साहित्य अकादमी साहित्यक संवाद, प्रकाशन और उसका देश भर में प्रसार करने वाली केन्द्रीय संस्था है| यह एक ऐसी संस्था है, जो कि चौबीस भारतीय भाषाओं जिनमें 22 राजभाषा और अन्य दो राजस्थानी तथा अंग्रेजी भी सम्मिलित हैं, के साहित्यिक क्रिया-कलापों का पोषण करती है| अतः अकादमी प्रत्येक वर्ष मान्यता प्रदत्त साहित्यिक कृतियों के लिए पुरस्कार प्रदान करती है| साथ ही इसमें अनूदित कृतियों को भी यह पुरस्कार प्रदान किया जाता है| ये पुरस्कार साल भर चली परिचर्चा, संवीक्षा और चयन के बाद घोषित किये जाते हैं| अब तक साहित्य की गद्य विधा के क्षेत्र में तेईस उपन्यासों को यह सम्मान प्रदान किया गया है| इसमें 18 पुरुष लेखक और 5 महिला लेखिकाओं को उनके उपन्यास पर यह सम्मान दिया गया है| सामाजिक चेतना में ही साहित्य जीवित रह सकता है और अपनी सार्थकता सिद्ध

कर सकता है| साहित्य अपने उद्देश्य में तभी सफल होगा, जब आम जन की बात करेगा, उनके प्रति समाज को झकझोरे और उनके हितों का संवर्द्धन करे| साहित्य समाज का वह परिधान है जो सामान्य जन के सुख-दुःख, लगाव-अलगाव के ताने से बुना जाता है| जिसमें विशाल जन समूह की आवाज सुनाई देती हो| अतः सामाजिक चेतना में ही साहित्य जीवित रह सकता है और अपनी सार्थकता सिद्ध कर सकता है| यह पुरस्कार ऐसे ही साहित्य को बचाने की उसे पोषित करने की पहल है| आगे प्रकाशन वर्ष के अनुसार इन सभी सम्मानित उपन्यासों का क्रमशः परिचयात्मक सर्वेक्षण किया गया है|

### 1.1. 1961- 1980 के मध्य पुरस्कृत हिंदी उपन्यास

#### 1. भगवतीचरण वर्मा

भगवतीचरण वर्मा का जन्म 30 अगस्त, 1903 को उन्नाव जिले (उ.प्र.) के शफीपुर गाँव में हुआ था| वर्मा जी ने अपना लेखन कार्य कविता से प्रारंभ करते हैं और एक उपन्यासकार के रूप ख्याति प्राप्त करते हैं| 1933 के आसपास प्रतापगढ़ के राजा साहब के साथ रहे हैं, साथ ही कलकत्ता में फिल्म कॉर्पोरेसन में 1936 के आसपास कार्य किया है| इन्होंने 'विचार'(1940) नामक साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन व संपादन किया है| इसके साथ बम्बई में फिल्म-कथालेखन और दैनिक 'नवजीवन'(1948) का भी संपादन किया है| साथ ही वर्मा जी आकाशवाणी के कई केन्द्रों में भी कार्यरत रहे थे| वर्मा जी ने साहित्य की कई विधाओं में अपना लेखन कार्य किया है| 'हमारीउलझन' इनका विचारात्मक निबंधों का संग्रह है| 'इंस्टालमेंट', 'दो बाँके' और मोर्चाबंदी इनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं| 'बुझता दीपक', 'रुपया तुम्हे खा गया' और 'वसीयत' इनके नाटक है और 'चलते-चलते' इनका रेडियो नाटक है| साथ ही 'मेरा शेरा' इनका बाल नाटक है| 'ये सात और हम' एवं 'अतीत के गर्त से' इनके संस्मरण संग्रह है| 'साहित्य की मान्यताएँ' और 'साहित्य के सिद्धांत तथा रूप' में इन्होने साहित्य और कला के सैद्धांतिक पक्ष को अपने अनुभव के द्वारा व्याख्यायित किया है|

**'भूले बिसरे चित्र' (1961)**

वास्तव में व्यक्तिवादी वह है जो समाज से पहले व्यक्ति की सत्ता और अस्तित्व को स्वीकार करता है| उसकी दृष्टि में व्यक्ति लक्ष्य होता है, समाज-व्यवस्था माध्यम मात्र होती है| वह अपने प्रति स्वयं उत्तरदायी होता है| वर्तमान समय में कई कला-आंदोलनों के माध्यम से व्यक्तिवादी विचारधारा व्यक्त हो रही है| अपनी लेखन कौशल से भगवतीचरण वर्मा व्यक्तिवादी उपन्यासकारों की श्रेणी में आते हैं| इनका प्रथम उपन्यास 'पतन' 1928 ई. में प्रकाशित हुआ था| इसके बाद इन्होंने काफी उपन्यास लिखे जिसमें 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'आखिरी दाँव', 'अपने खिलौने', 'भूले-बिसरे चित्र', 'वह फिर नहीं आई', 'सामर्थ्य और सीमा', 'थके पाँव', 'रेखा', 'सीधी सच्ची बातें', 'सबहिं नचावत रामगोसाई', 'प्रश्न और मरीचिका', 'युवराज चूणडा', 'धुप्पल', 'चाणक्य' आदि प्रकाशित हो चुके हैं| 1959 ई. में प्रकाशित इनकी 'भूले-बिसरे चित्र' उपन्यास को सन 1961 ई. में साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया| इस उपन्यास में एक मध्यमवर्गीय परिवार की चार पीढ़ियों की कथा के माध्यम से भारतीय समाज की विगत अर्धशती का इतिहास चित्रित किया गया है| मुंशी शिवलाल अर्जीनवीस है| उनके पुत्र ज्वालाप्रसाद तहसीलदार और फिर डिप्टीकलेक्टर बनते हैं| उनका पुत्र गंगाप्रसाद भी डिप्टीकलेक्टर बनता है| आगे गंगाप्रसाद का पुत्र नवलकिशोर राष्ट्रीय संग्राम में शामिल हो जाता है| लेखक ने सन 1880 ई. से 1930 ई. तक के भारतीय जीवन और मानवीय मूल्यों में हुए बदलाव का चित्रण किया है| पूरी किताब पांच खण्डों में विभाजित है| शुरू के दो खण्डों में सामन्तशाही का चित्रण है| तीसरे खण्ड में पूँजीवाद सामने आता है| चौथे खण्ड में आधुनिक राजनीतिक चेतना का उदय होता है और पाँचवें खण्ड में नवलकिशोर नये युग का प्रतीक बनकर सामने आता है| पूरे उपन्यास में चार पीढ़ियों की लगभग 50 वर्षों के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, और नैतिक मूल्यों का कथात्मक इतिवृत्त एक साथ दिखाया गया है|

## 2. जैनेन्द्र कुमार

जैनेन्द्र हिंदी साहित्य के महत्त्वपूर्ण साहित्यकार हैं| मानव मन की गहराई को अपने लेखन का विषय बनाने वाले लेखकों में इनका नाम प्रमुखता से लिया जाता है| गद्य की अनेक विधाओं में लेखन कार्य करने वाले जैनेन्द्र का जन्म उत्तर प्रदेश के कौड़िया गंज गाँव में 2 जनवरी 1905 ई. को हुआ| सन 1921 के असहयोग आन्दोलन के प्रभाव से इन्होंने अपनी पढ़ाई छोड़ दी थी| और आजादी की लड़ाई में जेल भी गए| इसका असर जैनेन्द्र के लेखन पर अप्रत्यक्ष रूप से दिखलाई पड़ता है| साथ ही यह ध्यान देने योग्य है कि इस तरह की पृष्ठभूमि होने के बावजूद जैनेन्द्र के लेखन का विषय मनोविज्ञान पर केन्द्रित रहा| इनके द्वारा लिखी गयी साहित्यिक कृतियों का आगे परिचय क्रमशः दिया गया है| इनके द्वारा लिखे गए प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं- 'प्रस्तुत प्रश्न', 'जड़ की बात', 'पूर्वोदय', 'साहित्य का श्रेय और प्रेय', 'मंथन', 'सोच-विचार', 'काम, प्रेम और परिवार', 'समय और हम', 'परिप्रेक्ष', 'राष्ट्र और राज्य', 'सूक्तिसंचयन', 'इतस्ततः' आदि| 'फांसी', 'जयसंधि', 'वातायन', 'नीलम देश की राजकन्या', 'एक रात', 'दो चिड़ियाँ', 'पाजेब', 'ध्रुवयात्रा' आदि इनके प्रमुख कहानी संग्रह है| इन्होंने कुल बारह उपन्यास लिखा है जो इस प्रकार है- 'परख' 1929 ई. में लिखा इनका पहला उपन्यास है| 'सुनीता', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी', 'सुखदा', 'विवर्त', 'व्यतीत', 'जयवर्धन', 'मुक्तिबोध', 'अनन्तर', 'अनामस्वामी', और 'दशार्क' आदि इनके चर्चित उपन्यास हैं| इन्होंने दो संस्मरण ग्रन्थ लिखा है- 'मेरेभटकाव', और 'ये और वे'| 'अकाल पुरुष गाँधी' के नाम से इन्होंने जीवनी लिखी है| 'कहानी : अनुभव और शिल्प' तथा 'प्रेमचंद एक कृति व्यक्तित्व' इनकी आलोचनात्मक कृतियाँ हैं| जैनेन्द्र ने साहित्य की पर्याप्त व्याख्या करते हुए विभिन्न संदर्भों में अपने विचार को व्यक्त कर पुष्ट किया है| जैनेन्द्र अपनी पुस्तक साहित्य का श्रेय-और प्रेय' में साहित्य की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि - "मनुष्य की मनुष्य के साथ, समाज के साथ, राष्ट्र के और विश्व के साथ और इस तरह स्वयं अपने साथ जो एक सुन्दर समंजसता, समरसता, समस्वरता (harmony) स्थापित करने की चेष्टा चिरकाल से चली आ रही है, वही मनुष्य-जाति

की समस्त संगृहित निधि की मूल है| अर्थात् मनुष्य के लिए जो कुछ उपयोगी, मूल्यवान, सारभूत आज है, वह ज्ञात और अज्ञात रूप में उसी एक सत्य-चेष्टा का प्रतिफल है| इस प्रक्रिया में मनुष्य जाति ने नाना भांति की अनुभूति-भण्डार लिपिबद्ध है, वही साहित्य है|"[2] अतः इनकी लेखन की सक्रिय भूमिका साहित्य को और मजबूत आयाम प्रदान करता है|

**मुक्तिबोध (1966)**

मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों में जैनेन्द्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, और डॉ. देवराज अग्रणी हैं| 1965 में लिखी गयी जैनेन्द्र कुमार की रचना 'मुक्तिबोध' को 1966 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया| इस उपन्यास में लेखक एक ऐसे अछूते विषय को सामने लाते हैं जो अब तक उपेक्षित था| दुविधा की जटिलता के कई स्तरों को लेकर लिखा गया यह उपन्यास एक सामान्य व्यक्ति के असामान्य जीवन की कथा कहता है| जैनेन्द्र ने अपने लेखन में व्यक्ति की मनःस्थिति को बहुत बारीकी से दर्शाया है| उम्र की सीमा जैसे-जैसे बढ़ती है मनुष्य अपने आंतरिक और बाह्य संघर्षों से हर क्षण लड़ता रहता है| ऐसी ही अंतर्द्वंद की जटिलता की कहानी है 'मुक्तिबोध'| जहाँ व्यक्ति एक तरफ सामाजिक ढांचे से ढका हुआ है तो दूसरी तरफ निजी और व्यक्तिगत ढांचे से| जब भी व्यक्ति इसमें से किसी एक ढांचे की तरफ अपना झुकाव दिखाता है आंतरिक द्वन्द की खीच तान शुरू हो जाती है| ऐसे ही खीच तान की स्थिति में है उपन्यास का केंद्रीय पात्र सहाय जो अपने बोध से मुक्ति चाहते हैं|

**३. अमृतलाल नागर**

हिंदी साहित्य के मूर्धन्य रचनाकार अमृतलाल नागर जी का जन्म 1916 ई. आगरा में एक गुजराती ब्राह्मण परिवार में हुआ था| नागर जी ने गद्य की अनेक विधाओं में लेखन कार्य कर साहित्य को हर तरह से संपन्न और समृद्ध किया है| इन्होंने निबंध, कहानी, उपन्यास, नाटक, संस्मरण, रिपोर्ताज, जीवनी, आत्मकथा, व्यंग-लेख लिखकर साहित्य में अहम योगदान दिया| लेखन की

विविधता के कारण प्रेमचंदोत्तर साहित्यकारों में अमृतलाल नागर जी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है| इनके बहुआयामी साहित्य को देखकर इनकी प्रतिभा, संघर्ष क्षमता और साहित्य के प्रति एकनिष्ठ प्रेम भाव का अंदाजा लगाया जा सकता है| 'साहित्य और संस्कृति' इनके ललित निबंधों का संग्रह है, साथ ही इनके स्वयं के जीवन से संबंधित 'टुकड़े टुकड़े दास्तान' आत्मपरक निबंधों का संग्रह है| 'चैतन्य महाप्रभु' इनके द्वारा लिखी गयी एकमात्र जीवनी है| 'जिनके साथ जिया' साहित्यकारों के संस्मरणों का संग्रह है| 'गदर के फूल' और 'ये कोठेवालियों' इन दोनों कृति को सर्वेक्षण की श्रेणी में रखा गया है| दरअसल 'ये कोठेवालियों' वेश्या जीवन पर और 'गदर के फूल' 1857 के संग्राम को केंद्र बना कर लिखा गया है| जिसके लिए तथ्य को स्वयं खोज कर निकाला और प्रमाण के तौर पर अपने कार्य में सम्मिलित किया| 'चकल्लस' नागर जी का हास्य-व्यंग लेख है| इसकी भूमिका में इन्होंने लिखा है - "मैंने आज की शैली के अनुसार विशुद्ध व्यंग नहीं लिखा, सहज मस्ती भरा मन पाया, जब जैसी मौज आई वैसी रंग-तरंगों में स्वयं बहकर अपने पाठकों को भी बहाता रहा| इस संग्रह की अनेक रचनाओं पर मुझे सराहना के मौखिक और लिखित शब्द-पदक प्राप्त हुए थे|"[3]

इन्होंने कई रेडियो नाटक लिखा है जो इस प्रकार है- 'बात की बात', चंदन वन', 'चक्करदार सीढ़ियाँ और अँधेरा' एवं 'उतारचढ़ाव'| 'युगावतार' और 'नुक्कड़ पर' इनके रंगमंच नाटक है, तथा 'चढ़त न दूजो रंग' इनका दूरदर्शन नाटक है| 'एक दिल हजार अफसाने' इनका कहानी संग्रह है, जिसमें इनकी समस्त कहानीयों को रखा गया है| अनुवाद के क्षेत्र में नगर जी ने कई देशी-विदेशी लेखकों के कुछ रचनाओं का अनुवाद किया है| जिसमें 'मोपासां की कहानियाँ' 'बिसाती' नाम से, गुस्ताव फ्लावेर के उपन्यास 'मादाम बोवरी' का 'प्रेम की प्यास' नाम से, एन्टन चेखव की कहानियों का 'कालापुरोहित' नाम से, विष्णु भट्ट गोडसे की मराठी पुस्तक 'माझा प्रवास' का अनुवाद 'आँखों देखा गदर' नाम से, क.मा. मुंशी के तीन गुजराती नाटक का अनुवाद 'दो फक्कड़' नाम से, एवं मामा वरेरकर का मराठी नाटक का 'सारस्वत' नाम से अनुवाद किया|

**अमृत और विष (1967)**

अमृतलाल नागर जी को सर्वाधिक सफलता उपन्यासों के क्षेत्र में मिली है| इनका पहला उपन्यास 'महाकाल' 1947 में प्रकाशित हुआ था| इसके बाद 'बूंद और समुद्र', 'शतरंज के मोहरे', 'सुहाग के नूपुर', 'अमृत और विष', 'सात घूँघट वाला मुखड़ा', 'एकदा नैमिषारण्य', 'मानस का हंस', 'नाच्यौ बहुत गोपाल', 'खंजननयन', 'बिखरे तिनके', 'अग्निगर्भा', 'करवट', और 'पीढियाँ' आपके प्रख्यात उपन्यास हैं| 'अमृत और विष' नागरजी का पांचवां उपन्यास है| इस उपन्यास के लिए 1967 ई. में आपको साहित्य अकादमी पुरस्कार सम्मान से सम्मानित किया गया था| उपन्यास में शुरू के तीन अध्याय अरविन्द के पूर्वजों अर्थात् अतीत की कथा है| चौथे अध्याय से अरविन्द के वर्त्तमान जीवन की कथा प्रारम्भ होती है जहाँ वे साठ के हो चुके हैं, और एक लेखक के रूप में नजर आते है| इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उपन्यास के भीतर एक उपन्यास का वितान रचा गया है| मध्यम वर्ग के साधारण गृहस्थ अरविन्द शंकर अपने जीवन की जटिलताओं से ग्रस्त है, लेकिन पत्नी माया का साथ उसे संजोये रखता है| अरविन्द आगे चलकर साहित्यकार के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करता है|

लेखक अरविन्द के जीवन में असंतोष भाव उनके बच्चों की देन है| इनके सभी बच्चे अपनी पसंद से अपना जीवन जीते हैं| इनकी इकलौती बेटी वरुणा टी.बी. की मरीज है और एक मुस्लिम लड़के से शादी करना चाहती है, लेकिन मामला गर्भपात पर आकर खत्म हो जाता है| अरविन्द के लेखन में उसके निजी जीवन की छाया सीधे तौर पर दिखलाई पड़ता है| उपन्यास का नायक रमेश और लच्छू जो एक मुख्य पात्र है दोनों के माध्यम से अपनी आदर्श सोच को व्यक्त करता है| नायक रमेश रद्धूसिंह की बेटी रानी से प्यार करता है और उनसे कहता है कि - "आप आजाद भारत में इस तरह दो शरीफ युवक-युवतियों को, जो कि बालिग हैं, समझदार हैं, स्वतंत्र है शरीफ आदमियों की तरह विवाह करके अपना संसार बनाना चाहता है, इस तरह अपमानित कैसे कर सकते हैं|"[4] कथा के अंत में रमेश के दो विवाह करने के बाद भी उसे एक नायक की तरह प्रस्तुत

किया गया है| लच्छू शुरू में पथभ्रष्ट होता है, लेकिन अंततः उसका हृदय परिवर्त्तन हो जाता है और वह एक आदर्श पात्र का रूप ले लेता है| आगे रुपन्नलाल भी एक ऐसा पात्र है जो अपने लाभ के लिए धर्म के नाम पर लोगों को गुमराह करता है| रद्धूसिंह जो रानी के पिता हैं जिनके अन्दर से आभिजात्य प्रवृत्ति जीवन के विषम परिस्थिति में भी नहीं छूटती| बैजनाथ जिसका आचरण तो सभ्य है लेकिन प्रवृत्तिवश अनैतिक है| आत्माराम, और बानो ये दोनों ऐसे पात्र हैं जो अपने-अपने जीवन के मार्गदर्शक है| प्रतिकूल परिस्थिति में भी बुलंद हौसले के साथ जीवन जीना इनकी विशेषता है|

यह उपन्यास मध्यमवर्गीय जीवन की उन तमाम सच्चाईयों से होकर गुजरता है जो यथार्थ की भूमि पर खड़ा उतरता है| रामविलास शर्मा के शब्दों में समझे तो यह उपन्यास कुछ ऐसा है - "समाज मंथन में अभी विष ही ज्यादा प्रकट हो रहा है, किन्तु अमृत का नितांत अभाव नहीं है| जो भी आज के भारत को, भारत के तरुण समुदाय को, आज की राजनीतिक-सामाजिक समस्याओं को, सहानुभूति से समझने-परखने का प्रयत्न करेगा, उसे अमृतलाल नागर के इस उपन्यास से वैचारिक उत्तेजना अवश्य मिलेगी| मेरा विश्वास है उसे भावनात्मक उत्तेजना भी मिलेगी|"[5]

**4. श्रीलाल शुक्ल**

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में सुप्रसिद्ध रचनाकारों में से एक श्रीलाल शुक्ल जी का जन्म 31 दिसंबर 1925 ई. लखनऊ के पास अतरौली गाँव में हुआ था| शुक्ल जी में साहित्य-सृजन के बीज तत्व बचपन से ही पिता और दादा से प्राप्त हो गया था| अपने पिता के बारे में शुक्ल जी लिखते हैं कि - "मेरे पिता को निर्धनता, सदाचारण और साहित्य तथा संगीत का संस्कार विरासत में मिला|"[6] शुरुआती समय में शुक्ल जी के पिता अपने पिता पर आश्रित थे और फिर उनकी बची खेती पर और अंत में अपने पुत्र पर| आर्थिक कमी के बावजूद इनका परिवार पठन-पाठन से जुड़ा रहा| लेकिन पिता के गुजर जाने के बाद परिवार की जिम्मेदारी की वजह से ये अपनी आगे की पढ़ाई जारी नहीं रख पाए| सन 1949 में स्टेट सिविल सर्विस की परीक्षा पास कर शुल्क जी डिप्टी

कलेक्टर पद पर नियुक्त हुए| पदोन्नति के क्रम में अधिकारी स्तर पर वे वित्त और सहकारिता मंत्रालयों से संबद्ध रहे और कुछ वर्षों तक इलाहबाद के एडमिनिस्ट्रेट के पर भी कार्य किया और 1983 को अपने पद से सेवानिवृत हुए| उनके साहित्य पर उनके द्वारा भोगे और जिए हुए यथार्थ का सीधा प्रभाव देखा जा सकता है| शुक्ल जी ने नियमित रूप से अपना लेखन कार्य 1953 ई. से प्रारंभ किया| जिसके बाद से एक दशक तक हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानियाँ एवं हास्य व्यंग निबंध लिखा| इनका पहला उपन्यास 'सूनीघाटी का सूरज' भारती और केशवचंद्र वर्मा के प्रेरणा से 1957 ई. में किताब महल से छपा|

शुक्ल जी को लिखने की प्रेरणा काफी कम उम्र में ही मिल चुकी थी| बचपन से ही लेखन कार्य शुरू कर चुके शुक्ल जी अपने सन्दर्भ में लिखते हैं कि - "चौदह-पंद्रह साल की उम्र तक मैं एक महाकाव्य (अधूरा) दो लघु उपन्यास, कुछ नाटक और कहानियाँ लिख चुका था| नए लेखकों को सिखाने के लिए उपन्यास-लेखन की कला पर एक ग्रन्थ भी शुरू किया था, पर वह दो अध्यायों के बाद ही बैठ गया|"[7] इन्होंने कुल दस उपन्यास लिखा है| इन्होंने पहला उपन्यास 'सूनी घाटी का सूरज' नाम से लिखा है| इसके बाद 'अज्ञातवास', 'रागदरबारी', 'आदमी का जहर', 'सीमाएँ टूटती हैं', 'मकान', 'पहला पड़ाव', 'विस्रामपुर का संत', 'राग-विराग', 'बब्बर सिंह और उसके साथी' आदि उपन्यास लिखा| 'एक चोर की कहानी', 'एक लुढ़कता हुआ पत्थर', 'छुट्टियाँ', 'यह घर मेरा नहीं', 'सर का दर्द', 'अपनी पहचान', 'शिकारियों के बीच', 'मेरी भाभी', 'दिन ढलते' ये सभी इनकी कहानियाँ है| एक प्रसिद्ध कथाकार के साथ-साथ शुल्क जी एक प्रतिष्ठित व्यंगकार के रूप में भी जाने जाते हैं| 'अंगद का पाँव', 'यहाँ से वहाँ', 'अमरव नगर में कुछ दिन', 'कुछ जमीन पर कुछ हवा में', 'आओ बैठ लें कुछ देर', 'कुंती देवी का झोला', 'अगली शताब्दी का शहर', 'जहालत के पचास साल', 'खबरों की जुगाली' आदि आपके निबंध संग्रह हैं| आपके निबंध आधुनिक जीवन की विसंगतियों को आधार बनाकर लिखा गया है| सामान्य भाषा में समझे तो आपके व्यंग चुटकी शैली में नजर आते है| यहाँ तक कि आपकी कोई भी विधा को देखें उसमें व्यंग का स्पर्श जरूर

मिलता है| शुक्ल जी के लेखन पर अपना विचार प्रकट करते हुए रघुवीर सहाय लिखते हैं - "श्रीलाल, प्रेमचंद और अज्ञेय के अधिक निकट पड़ते हैं जो टूटे मूल्यों की स्थापना के लिए प्रयत्नशील हैं और बंकिम के तो बहुत ही निकट हैं क्योंकि वह बार–बार उसकी याद दिलाते हैं जो टूट चुका है पर टूटकर नष्ट हो जाने के योग्य नहीं था|"[8] 'राजभाषा और महाराज भाषा' एवं हिंदी तेरा रूप अनूप' नाम से आपने दो टिप्पणियाँ भी लिखी हैं| साथ ही आपको आपके साहित्य के लिए कई पुरस्कार से सम्मानित किया गया है| 'राग दरबारी' के लिए आपको सन 1969 में साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया| इसके बाद 1978 में 'मकान' उपन्यास पर मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य परिषद् का पुरस्कार दिया गया| 1988 में उ.प्र.हिंदी संस्थान का साहित्य भूषण सम्मान, 1989 में शारदा सम्मान, 1994 में लोहिया(उ.प्र.), 96 में शरद जोशी सम्मान(म.प्र.), और 97 में मैथलीशरण गुप्त सम्मान(म.प्र.) दिया गया| सन 1999 में 'बिश्रामपुर का संत' उपन्यास पर आपको व्यास सम्मान से सम्मानित किया गया| साथ ही शुक्ल जी को 2008 में पद्म भूषण और 2011 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया|

**राग दरबारी (1969)**

शुक्ल जी को सबसे ज्यादा कामयाबी साहित्य के उपन्यास विधा में मिली| जिसमें 'राग दरबारी' उपन्यास अपनी व्यंग्यात्मक शैली को लेकर एक अलग पहचान रखता है| ग्रामीण जीवन के यथार्थ को प्रतीकात्मक रूप में सजा कर लिखा गया उपन्यास सन 1968 में प्रकाशित हुआ| अपनी प्रतीकात्मक शैली की वजह से यह उपन्यास आज भी प्रासंगिक है| उपन्यास की कथावस्तु शिवपाल गंज को आधार बनाकर देश की स्थिति का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है| उपन्यास के पहले पृष्ठ पर लोकतंत्र की स्थिति का प्रतीकात्मक चित्र देखने योग्य है| यहाँ लेखक ने एक खटारा ट्रक के माध्यम से लोकतंत्र की जर्जर स्थिति को समझाने का बेहद खुबसूरत और सफल प्रयास किया है| उपन्यास में केन्द्रीय पात्र के रूप में वैद्य जी को दिखाया गया है, जिनके दो पुत्र हैं बद्री पहलवान और रुप्पन बाबू| साथ ही ये पात्र रंगनाथ के मामा भी हैं| व्यावसायिक तौर पर ये वैद्य का काम

करने के साथ-साथ छंगामल इंटर कॉलेज में मैनेजर भी हैं| इसके अतिरिक्त ये को-ऑपरेटिव यूनियन के मैनेजिंग डायरेक्टर एवं सनीचर जो इनके यहाँ काम करता है की आड़ में ग्राम सभा के प्रधान भी हैं| इससे इनके व्यक्तित्व की विविधता को समझा जा सकता है| यहाँ वैद्य जी एक ऐसे ही पात्र हैं जिनकी भ्रष्ट राजनीति से लोकतंत्र खोखला और मानवीय मूल्य गर्त में चली जाती है| उपन्यास में कहीं भी लेखक का गाँव के प्रति मोह नहीं दिखता है| जिससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि लेखक यथार्थ को लेकर कितने सजग हैं| अतः यथार्थ का कड़वा सच उपन्यास को आदर्श की भूमि से दूर करता है|

उपन्यास में प्रतीकात्मक तौर पर लोकतांत्रिक भारतीय समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, चुनावी छद्म, अवसरवादिता, लूट-खसोट, बंदर बाँट, भाई-भतीजावाद, भ्रष्ट प्रशासनिक एवं लचर न्यायिक प्रक्रिया और अराजकता को बड़े ही सूक्ष्म तरीके से व्याख्यायित किया गया है| कथा के स्तर पर इसकी व्यापकता, संवेदना की गहराई में उतर कर, भाषा में नए प्रयोग उपन्यास को व्यंग्य रूप नया तेवर प्रदान करता है| लोकतंत्र के खराब कल-पुर्जे, शिक्षा व्यवस्था में गुंडों की पैठ, ग्राम पंचायत की खस्ता हालत, अनैतिकता ये सभी तत्व लेखक की कल्पना नहीं है ये शुक्ल जी का भोगा हुआ यथार्थ है| ममता कालिया उपन्यास के सन्दर्भ में लिखती हैं कि -"श्रीलाल जी अपनी अफसर साही से जुड़े अनुभव जगत से यह राग सरकारी लिखा होगा, तभी इसका नाम राग दरबारी' रखा है|"[9] उपन्यास के आरंभ से ही लोकतांत्रिक व्यवस्था की सच्चाई को देखा गया है, आगे उदहारण के तौर पर उपन्यास के कुछ शुरुआती पंक्तियों को देख सकते हैं - "वहीं एक ट्रक खड़ा था| उसे देखते ही यकीन हो जाता था कि इसका जन्म केवल सड़को के बलात्कार करने के लिए हुआ है|"[10]

मध्यकालीन भारतीय सामंती व्यवस्था में दरबार में राजाओं के समक्ष उनके मनोरंजन के लिए संगीत या गीत प्रस्तुत किये जाते थे| अतः 'राग दरबारी' शीर्षक के सन्दर्भ में लेखक का आशय यह है कि सत्ता के अनुकूल रहने वाले लोग ही आज के दौर में सुखी रह सकते है| उपन्यास

मुख्य रूप से लोकतांत्रिक समाज में फैली विसंगति को बड़ी सजीवता के साथ रंगनाथ के माध्यम से उसकी बौद्धिक स्थिति, बद्री पहलवान के द्वारा समाज में बाहुबल की स्थिति, सनीचर जैसे लोगों का संघर्षमय जीवन, गयादीन के माध्यम से लोगों की बेबसी, प्रिंसिपल के माध्यम से स्वामिभक्ति के साथ-साथ शराब, डकैती, जुआ, गरीबी, मक्कारी को प्रस्तुत करता है| यह लेखक का समाज के प्रति दायित्वों को रेखांकित करता है|

**5. भीष्म साहनी**

हिंदी कथा साहित्य की प्रगतिशील परंपरा के गौरवपूर्ण, शक्तिशाली हस्ताक्षर भीष्म साहनी का जन्म 1915 ई. में रावलपिंडी में हुआ था| साहनी जी के जन्म के समय रावलपिंडी पश्चिमी अविभाजित भारत का मशहूर शहर हुआ करता था| पिता आर्यसमाजी थे, जो समाज में जितनी भी बुराइयाँ, कुरीतियाँ थीं उसके समापन के लिए सच्चे मन से कार्यरत थे, जिसमें हिन्दू धर्म को वरीयता ज्यादा देते थे| भीष्म साहनी जी और उनके बड़े भाई के कार्य में यहीं चीजे अमिट रूप से अपना प्रभाव छोड़ती गई| यही वजह थी कि इनके लेखन में सामंतवाद, पूँजीवाद और शोषण के विरुद्ध प्रतिपक्ष के रूप में खड़ा है| इस सन्दर्भ में साहनी जी लिखते हैं - "बहुत कुछ है जो अपने बचपन से हम संस्कार स्वरूप ग्रहण करते हैं, ज्यों-ज्यों बालक अपने परिवेश पर आँखें खोलता है, जो-जो कुछ वह देखता-सुनता है, वही संस्कार बनता जाता है| आकाश की नीलिमा, ठंडी हवा के झोंके, गली में घूमते भिखारियों की आवाजें जहां कहीं कोई छोटी सी घटना दिल की अथक चेतना को छू जाती है, वहीं अपना छाप छोड़ जाती है| इसके अतिरिक्त बचपन में माता-पिता और घर के परिवेश का असर बहुत गहरा पड़ता है| मैंने जिस माहौल में आँख खोली वह ठहरा हुआ दौर नहीं था| उसमें हलचल थी| नये-नये विचार समाज को आंदोलित कर रहे थे| मेरे पिता जी आर्यसमाजी विचारों के थे| घर के अन्दर सदा समाज सुधार की चर्चा चलती रहती| दूसरी ओर स्वतंत्रता आन्दोलन भी जोड़ पकड़ रहा था| जलसे-जुलूसों का जमाना था| भावनात्मकता से भरा वातावरण हमारे चारों ओर था| उसका प्रभाव मुझपर और मेरे लेखन कार्य पर जरूर पड़ा|"[11] पिता

के व्यापार में हाथ बटानें के साथ-साथ वो अपना मन लगाने के लिए नाटक मंडली की स्थापना कर उसमें भी काम करने लगे| भीष्म साहनी एक सशक्त अभिनेता के रूप में भी जाने जाते हैं| काफी समय तक आप इप्टा से जुड़े रहे और कई फिल्मों में भी काम किया जैसे- सईद मिर्जा द्वारा निर्देशित फिल्म 'मोहन जोशी हाजिर हो', और गोविन्द निहलानी द्वारा निर्देशित 'तमस' सीरियल में बेहतरीन अदाकारी की|

सन 1965 में कमलेश्वर ने 'नयी कहानियां' पत्रिका से त्यागपत्र दे दिया जिसे आगे चलकर भीष्म जी ने ही कुछ समय तक संभाला| साथ ही आप प्रगतिशील लेखक संघ और 'एफ्रो एशियाई लेखक संघ' से भी जुड़े रहे| अतः इन सारी चीजों ने साहनी जी के लेखन पर सीधा प्रभाव डाला| सच्ची घटना पर आधारित इनकी पहली कहानी 'नीली आँखें' लिखकर अपना लेखन कार्य शुरू किया| आपने अबतक कुल सात उपन्यास लिखा है| 'झरोखे', 'कड़ियाँ', 'तमस', 'बसंती', 'मय्यादास की माडी', 'कुन्तो' और 'नीलू नीलिमा निलोफर' आपके उपन्यास हैं| 'हानूश', 'कबिरा खड़ा बाजार में', 'माधवी', 'मुआवजे', 'रंग दे बसंती चोला', और 'आलमगीर' आपके नाटक हैं| आपके नौ कहानी संग्रह इस प्रकार हैं- 'भाग्यरेखा', 'पहला पाठ', 'भटकती राख', 'पटरियां', 'वड्चू', 'शोभायात्रा', 'निशाचर', 'पाली', और 'डायन'| 'आज का अतीत' आपकी आत्मकथा है| साथ ही 'अपनी बात' नाम से निबंध और बड़े भाई बलराज साहनी के नाम जीवनी 'बलराज माई ब्रदर्स' लिखी है|

**तमस (1975)**

सन 1975 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित उपन्यास 'तमस' भीष्म साहनी जी का सबसे चर्चित ग्रंथ है| यह उपन्यास लेखक के भोगे हुए यथार्थ का परिणाम है| अपने इस उपन्यास लेखन के आरम्भ को लेकर लेखक अपनी आत्मकथा में लिखते है कि - "मुझे ठीक से याद नहीं कि कब बम्बई के निकट, भिवंडी नगर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए| पर मुझे इतना याद है कि उन दंगों के बाद मैंने 'तमस' लिखना आरम्भ किया| ...यह सचमुच अचानक ही हुआ, पर जब कलम उठाई और काग़ज़ सामने रखा तो ध्यान रावलपिंडी के दंगों की ओर चला गया|"[12] उपन्यास की

शुरुआत ही लेखक ने दंगा कराने की एक योजना से की है| अतः लेखक ने इसे शुरू में ही स्पष्ट कर दिया कि दंगा जैसी घटनाएँ होती नहीं करायी जाती है| और इसका शिकार हमेशा निर्दोष और कमजोर लोग होते हैं| उपन्यास में 'नत्थू' इसी कमजोर और बेबस वर्ग का प्रतीक है| यह उपन्यास 1947 में हुए भीषण दंगे की पांच दिनों की त्रासद कहानी है| उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम के बीच की बढ़ती हुई खाई और उससे उत्पन्न तनाव को लेखक ने कुछ इस तरह दर्शाया है - "पास से गुज़रने पर एक आदमी ने ऊँची आवाज़ में नारा लगाया : 'कौमी नारा'-बन्दे मातरम!, बोल भारत माता की-जय!, महात्मा गांधी की-जय! इसके बाद सहसा केवल क्षण-भर की चुप्पी के बाद कुछ ही दूरी पर जहाँ एक और गली इस को काट गई थी, एक और नारा उठा : 'पाकिस्तान-ज़िन्दाबाद! और क़ायदे आज़म-ज़िन्दाबाद!"[13] उपन्यास में कांग्रेस और मुस्लिम लीग के आपसी मतभेद से आम लोगों के मन में अविश्वास भाव उत्पन्न हो जाता है| और इस तरह की भावना वाले माहौल में तर्क और विवेक जैसी बातें बेअसर हो जाती है| ऐसे तनावपूर्ण माहौल में एक छोटी सी चिंगारी पूरी मानवता को जला कर राख करने के लिए काफी होती है| उपन्यास को पढ़कर यह अनुभव किया जा सकता है कि बड़े लोगों की स्वार्थ पूर्ति करने वाली नीतियाँ जन साधारण को किस प्रकार चोट पहुंचाती है| किसी भी राष्ट्र में जबतक ऐसे पथभ्रष्ट और कपटी लोग होंगे समाज का उत्थान नामुमकिन है| इसे लिखने के पीछे के नजरिये को साँझा करते हुए साहनी कहते हैं - "एक संकटपूर्ण स्थिति की पृष्ठभूमि में विभिन्न धर्मों, वर्गों, विचारधाराओं के लोगों की प्रतिक्रिया और उनके कारनामे ही दिखाए गए हैं| इससे अधिक कुछ नहीं|"[14]

**6. यशपाल**

मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित यशपाल का जन्म फिरोजपुर छावनी में सन 1903 में हुआ| साहित्य में इन्हें प्रगतिवादी लेखकों की श्रेणी में गिना जाता है| यशपाल एक लेखक के अलावा उनकी सक्रियता राष्ट्रीय आन्दोलनों में बतौर आंदोलनकारी की भी रही है| जाहिर है इनके लेखन पर इसका सीधा प्रभाव पड़ा होगा| इन्होंने जितनी निष्ठा से राष्ट्र हित में समर्पण दिखाया उतना ही

समर्पित भाव उनके लेखन में देखने को मिलता है| साहित्य की अनेक गद्य विधा में इनके योगदान की एक लम्बी लिस्ट है जो आगे वर्णित है| 'न्याय का संघर्ष', 'गाँधीवाद की शव परीक्षा', 'बात-बात में बात', 'देखा सोचा समझा', 'जग का मुजरा', 'बीबी जी कहती हैं, मेरा चेहरा रोबीला है', 'मार्क्सवाद' आदि इनके निबंध ग्रन्थ हैं| इनके निबंध जितने साहित्यिक तत्व हैं उतने ही राजनीतिक विषयों को लेकर भी लिखा गया है| आपके दो यात्रा-वृत्तान्त हैं- 'लोहे की दीवार के दोनों ओर', और 'राहबीती'| इन्होंने एक संस्मरण लिखा है जो तीन भाग में है, जिसमें इन्होंने क्रन्तिकारी साथियों के संस्मरण को अंकित किया है| इन्होंने अपने लेखन की शुरुआत कहानियों से की है| अब तक आपके कुल 16 कहानी संग्रह है| 'ज्ञानदान' 1948 में प्रकाशित इनका पहला कहानी संग्रह है| 'अभिशप्त', 'भस्मावृत चिनगारी', 'वो दुनिया', 'फूलों का कुर्ता', 'धर्मयुद्ध', 'उत्तराधिकारी', 'चित्र का शीर्षक', 'तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूँ', 'तर्क का तूफान', 'उत्तमी की माँ', 'औ भैरवी', 'सच बोलने की भूल', 'खच्चर और आदमी' तथा 'भूख के तीन दिन' आदि आपके कहानी संग्रह की विशालता को प्रदर्शित करता है| 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'दिव्या', 'पार्टी कामरेड', 'मनुष्य के रूप', 'अमिता', 'झूठासच' (दो भाग)- 'वतन और देश' एवं 'देश का भविष्य'), 'बारह घंटे', 'अप्सरा का शाप', 'क्यों कैसे', और 'मेरी तेरी उसकी बात' आदि उपन्यास से इनके रचना कौशल का पता लगाया जा सकता है| यशपाल का मानना था कि समाज को उन्नत तभी बनाया जा सकता है जब समाज में सामाजिक समानता के साथ-साथ आर्थिक समानता भी होगी|

**मेरी तेरी उसकी बात (1976)**

1975 में प्रकाशित यशपाल का यह अंतिम उपन्यास है, जिसको 1976 में साहित्य अकादमी पुरस्कार सम्मान से सम्मानित किया गया था| इसकी कथा 1919 से लेकर 1945 ई. तक की राजनीतिक घटनाओं और उससे उत्पन्न स्थिति को रेखांकित करता है| उपन्यास की राजनीतिक पृष्ठभूमि को देखकर इसे राजनीतिक उपन्यास की श्रेणी में भी रख कर देखा गया है| उपन्यास के प्रारंभिक पृष्ठों में अंकित सामाजिक और मानवीय मूल्य आगे बढ़ने के क्रम में कई प्रश्न छोड़ता

हुआ चलता है| इसमें धर्म और लिंग को बराबर से देखा जा सकता है| उपन्यास के शुरू में लेखक ने उपन्यास के नाम के साथ 'किसकी बलि?' लिखा है| इसे एक नए प्रयोग की तरह देखा गया है जो पाठक के मन में जिज्ञासा पैदा करती है| साथ ही उपन्यास के नाम से सामूहिकता की बात भी स्पष्ट होती है, जहाँ मेरी, तेरी, उसकी बात इसे प्रमाणित करता है| उपन्यास में ऐसे कई प्रसंग है जो आज भी प्रासांगिक है| उपन्यास में ऐसे कई विषय हैं जो तत्कालीन समाज की विसंगतियों को रेखांकित करती हुई आगे बढ़ती है, जिसमें लेखक की चिंता स्पष्ट रूप से झलकती है| एक तरफ जहाँ समाज में विस्तृत स्तर पर बड़े-बड़े आन्दोलन हो रहे थे वहीं समाज के अन्दर छोटी-छोटी अनेक प्रकार की समस्याएँ भी एक साथ साँस ले रही थी| प्रकाशचंद मिश्र लिखते हैं - "गाँधी जी का सत्याग्रह आन्दोलन, चौरा-चोरी कांड, साइमन कमीशन, नमक सत्याग्रह, लखनऊ कांग्रेस अधिवेशन, त्रिपुरा कांग्रेस अधिवेशन, फरीदकोट के प्रश्न पर गाँधी जी का अनशन, द्वितीय विश्वयुद्ध और एवं उससे संबद्ध भारतीय राजनीति में युद्ध के प्रश्न को लेकर कांग्रेस-कम्युनिस्ट मतभेद, क्रिप्स मिशन, नैतिक अधिकार का प्रश्न और गाँधीजी का सत्याग्रह, भारत छोड़ो आन्दोलन, ....कांग्रेस और मुस्लिम लीग के क्रिया-कलापों के सन्दर्भ में उभरने वाली देश विभाजन की आंतरिक राजनीति आदि-आदि पर अनेक छोटे बड़े राजनीतिक प्रश्नों एवं घटनाओं को यशपाल ने इस उपन्यास का आधार बनाया है|"[15]

गाँधी जी जहाँ एक तरफ शांति पूर्वक आन्दोलन कर रहे थे वहीं कम्युनिस्ट अंग्रेजो को मार कर उनमें दहशत पैदा करना चाह रहे थे जिसका परिणाम बहुत भयावह रूप ले लिया जिसकी किसी ने कल्पना नहीं की थी| उपन्यास में इस परिस्थिति को कुछ ऐसे दिखाया गया है कि जब - "युद्ध के समय मदन मोहन मालवीय, महात्मा गाँधी और नरमदली राजनैतिक नेता जनता को विश्वास दिला रहे थे ...हम सरकार का विश्वास और कृतज्ञता प्राप्त कर सकेंगे|"[16] वहीं "क्रन्तिकारी विदेशी शासकों को आतंकित करने और उनके मार्ग में बाधाएं डालने के लिए बड़े-बड़े अंग्रेज अफसरों का वध कर रहे थे|"[17] जिसका परिणाम जलियांवाला बाग के रूप आगे देखा गया| खिलाफत

आन्दोलन के बाद बाहरी तौर पर तो कोई प्रतिक्रिया नहीं देखि गयी लेकिन आन्तरिक तौर पर यह घाव लोगों में धीरे-धीरे गहरा होता चला गया| उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम विरोधाभास को दिखाने का आशय लेखक का उसके पीछे के राजनीतिक को उजागर करना था| ऐसी परिस्थिति से उत्पन्न परिणाम से जूझते लोगों का संघर्ष अब सिर्फ हिन्दू-मुस्लिम तक सीमित नहीं रह गया था बल्कि अन्य संप्रदाय (इसाई) भी उतना ही प्रभावित हुआ था| जिसे उपन्यास में बखूबी देखा जा सकता है|

उपन्यास में आम जीवन को लेकर भी प्रश्न उठाया गया है जिसमें जातीय भिन्नता के साथ-साथ सामान्य समस्याओं को भी दिखाया गया है| एक तरफ सांप्रदायिकता की मार तो दूसरी तरफ समाज में फैले भ्रष्टाचार, महंगाई, अवसरवाद की दोहरी चोट लोगों को अन्दर से खोखला बना रही थी| उपन्यास में जिन दो विश्व युद्ध की चर्चा हुई है उनसे उत्पन्न स्थिति ने हमारे समाज को हर तरह से खाली कर दिया था वस्तु और भाव दोनों स्तर पर हम शून्य होते जा रहे थे| उपन्यास में स्त्री के विषय को भी लेखक ने उभारने की कोशिश की है| वस्तुतः देखा जाय तो उपन्यास राजनीति और व्यक्ति के परस्पर क्रिया-प्रतिक्रियात्मक संबंधों को केंद्र में रखकर लिखा गया है| जिसमें बलि मानवता और महत्वाकांक्षाओ की दी गयी है|

**7. कृष्णा सोबती**

हिंदी साहित्य में कृष्ण सोबती सिर्फ एक नाम नहीं हैं, बल्कि एक विचार हैं| किसी समय में और भाषा में एक-दो लेखक ही ऐसे होते हैं, जिनकी रचनाएँ साहित्य और समाज के लिए घटना की तरह हो| ऐसे में कृष्णा जी का नाम सहज ही याद आ जाता है| कोई भी रचनाकार हो वह अपने जीवन के तमाम क्षणों को एक साथ पिरोकर प्रस्तुत करता है जो उसका अपना भोगा हुआ है| कृष्णा जी का जन्म पंजाब के जिला गुजरात में 18 फरवरी 1925 को हुआ था| एकांत प्रिय कृष्णा जी का कृतित्व बहुआयामी है| उपन्यासों के साथ-साथ आपने कहानी, संस्मरण, कविताएँ एवं साहित्यिक लेख भी लिखा है| विविधताओं से विभूषित इनकी प्रत्येक रचनाओं में एक सा जीवन

लक्षित होता है| उनकी रचनाओं में स्वत्व की झलक उनके जीवन के पीछे के कैनवास को जाता है| कृष्णा जी अपने साहित्य के प्रति रुझान को बताते हुए लिखती हैं - "उन दिनों हमारी खरीद नंबर एक थी किताबें और नंबर दो स्टेशनरी|.....जैसे-जैसे हम भाई-बहन बड़े होते गए, रूचि के मुताबिक अपनी-अपनी पसंद की किताबों के नजदीक पहुँचते गए| हमारी पसंद को मोड़ देनेवाली थी रात के खाने के बाद वाली बैठक, जिसमें हमें एक-से-एक किताबें पढ़कर सुनाई जातीं| यही हमारा साहित्य से पहला परिचय था| वह गहरा था खड़ा था| 9 बजे हमारे कमरे की बत्ती बुझा दी जाती|.....अपने-अपने बिस्तर में लेटें हम पिताजी की गहरी गूंजती आवाज का इंतजार करते| हम चाव से उछाव से, कभी भरी आँखों से शब्दों के अर्थ बीनते चले जाते| फूलवालों की सैर, गुलिस्ताँ बोस्ता, आनंदमठ, दुर्गादास राठौर, बंदा बिरागी, बंकिम, प्रेमचंद, सुदर्शन सुनते-सुनते किताबें स्वयं सरककर पास आने लगी और एक बड़ी दुनिया हमारे छोटे दिमागों में शोर मचाने लगी|"[18] आपने अपना लेखन कार्य कहानी विधा में शुरू किया| आपके साहित्य में औरतें समय के साथ बदलती हुई दिखलाई गयी है| आपकी रचनात्मकता ने जिस प्रकार से लोगों में बौध्दिक विकास के साथ नैतिक मूल्यों का प्रसार किया उसकी अनुगूँज आज भी बरकरार है| हिंदी साहित्य में लेखिका की विश्वसनीय उपस्थिति उनकी लम्बी साहित्यिक यात्रा की देन है| ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी पुरस्कार एवं उसकी महत्तर सदस्यता के अलावा, अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों और अलंकरणों से सुशोभित कृष्णा जी साहित्य की समग्रता में स्वयं को साधारणता की मर्यादा में एक छोटी-सी कलम का पर्याय बस मानती हैं| कृष्णा सोबती का रचना संसार-

**उपन्यास**

. 'डार से बिछुड़ी'

. 'सूरजमुखी अँधेरे के'

. 'मित्रो मरजानी'

. 'यारों के यार तीन पहाड़'

. 'जिंदगीनामा'

. 'दिलोदानिश'

. 'समय सरगम'

. 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान'

. 'चन्ना'

**कहानी संग्रह**

. 'बादलों के घेरे'

. 'सिक्का बदल गया'

. 'ऐ लड़की'

**संस्मरण**

. हम हशमत' (दो भागों में)

**विविधा**

. 'सोबती एक सोहबत'

. 'लेखक का जनतंत्र'

. 'सोबती-वैद संवाद'

**पुरस्कार**

. 'ज़िन्दगीनामा' पर 1980 में साहित्य अकादमी पुरस्कार एवं 1981 में पंजाब सरकार के 'साहित्य शिरोमणि' पुरस्कार प्राप्त|

. 'द हार्ट हेज इट्स रीजन' किताब को 2006 में हच क्रसवर्ड्स पापुलर बुक अवार्ड प्राप्त|

**जिंदगीनामा (1980)**

सन 1980 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित 'जिंदगीनामा' अंचल विशेष पर लिखा गया उपन्यास है| जिसका केन्द्रीय पात्र कोई व्यक्ति नहीं बल्कि 'डेरा जट्टा' गाँव हैं| उपन्यास में जिन्दगी से रूबरू कराने के लिए यहाँ मिट्टी की गंध है, काव्य, लोककथाएँ, लोकगीत, किस्से,

किवदंतियां, नदी-नाले हैं, खेत-खलियान हैं, खेतों में काम करते किशोर-किशोरियाँ हैं अतः ये साझी झांकी लेखिका के रागात्मक भाव को प्रदर्शित करता है| लेखिका 'जिंदगीनामा' के प्रति अपने लगाव और स्नेह को कुछ इस तरह बयां करती हैं - "जिंदगीनामा' को हाथ से लिखना-भर नहीं था| उसे तो जिंदगी की तरह ही जीना था| खेत में फसल की तरह ही उगाना था| ...मिट्टी की किस्म देखी| सिंचाई की थाह मापी| बीज भरा| मौसम देख बोआई शुरू कर दी| बीच में जो हो गुजरा, वह खेतिहर का मेहनत मुकद्दर और कुदरत की बरकत बख्शिश| बाकी फसल सामने है| अगर खूबी है तो धरती और बीज की-कमी है तो वह अपनी छोटी तौफीक की|"[19] उपन्यास का एक निश्चित कथानक निर्धारित करना सही नहीं ठहरेगा| उपन्यास में प्रथम विश्व युद्ध को भी जगह दी गई है| वहीं सामान्य मानस भूमि पर मानवीय संबंधों और व्यवहारों की असंख्य समस्याओं का भी चित्रण है| लेखिका ने उपन्यास की शुरुआत एक लम्बी कविता से करती हैं जो गद्य शैली में एक नए प्रयोग की तरह था| आगे कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार से है -

"गलबहियों-सी
उमड़ती, मचलती
दूधभरी छातियों-सी
चनाब और जेहलम की धरती
माँ बनी
...अमृत की बूँदों ने
लहू के पेड़ खड़े कर दिए
हरे-भरे खेतों की, मुंडेरों पर|"[20]

उपन्यास में हर तरह की चीजों का वर्णन है किस्सागोई से शुरू होता हुआ समय सापेक्ष भारतीय जनमानस की पूरी सच्चाई की तस्वीर बयां करता है| गाँव की सुंदर और असमान छटा जिसमें शाह की जमींदारी का एक तरफ अच्छा रूप को दर्शाता है, तो वहीं उसके शोषण को भी

एक ही समय में रेखांकित करता है| शाहनी और मेहरी चाची के आलावा अन्य नारी पत्रों की समाज और परिवार में स्थिति को भी दिखता है| कानून व्यवस्था की सच्चाई और फौजियों के सामान्य जीवन को भी सहजता के साथ समेटा गया है| 'जिंदगीनामा' के असल रूप का चित्रण करते हुए लेखिका लिखती हैं - "जिंदगीनामा का मौसम लंबा था| गाँव की काची गंध से कई सरदियाँ गरमियाँ महकती रहीं| मजलिसों ने घर गुंजान रखा| ...सहज सादगी और इंसानी गरमाहट से भरपूर यह भीड़ अपने आप ही कुछ इस तरह उभरती चली गई ज्यों धरती में उग आया हो गहरी जड़ोंवाला विशाल ज़िंदारूक्ख|"[21]

## 1.2 1990-2000 के मध्य पुरस्कृत हिंदी उपन्यास

### 1. शिव प्रसाद सिंह

हजारी प्रसाद जी के तेजस्वी शिष्यों में एक शिवप्रसाद सिंह का जन्म 19 अगस्त 1928 को जलालपुर, जमनिया, बनारस में हुआ है| 'नयी कहानी' आन्दोलन के आरंभकर्ता में से एक शिवप्रसाद सिंह ने साहित्य में अपनी अलग पहचान बनाने के लिए जाने जाते रहे है| कुछ लेखकों ने इनकी कहानी 'दादी माँ' को पहली नयी कहानी माना है| कहानी विधा में इन्होंने आजादी के बाद के सामाजिक यथार्थ को मानवीय दृष्टि प्रदान करने की कोशिश की है| इनके कुल छः कहानी संग्रह है- 'आर पार की माला', 'कर्मनाशा की हार', 'इन्हें भी इंतजार है', 'मुरदा सराय', 'अँधेरा हँसता है' और 'भेड़िये'| इन्होंने अपने कहानियों में शोषित, उपेक्षित, पीड़ित ग्रामीणों पर विशेष ध्यान दिया है| ये हजारी प्रसाद द्वि. जी की परम्परा के प्रमुख ललित निबंधकारों में से एक है| 'शिखरों के सेतु', 'कस्तूरी मृग', 'चतुर्दिक', 'मानसी गंगा', 'किस-किस को नमन करूँ', 'क्या कहूँ कुछ कहा न जाए', और 'खालिस मौज में' इनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह है| 'अलग-अलग वैतरणी', 'गली आगे मुड़ती है', 'शैलूष', 'मंजुशिमा', 'औरत', 'नीला चाँद', 'कोहरे में युद्ध', 'दिल्ली दूर है', 'वैश्वानर' आदि आपके प्रसिद्ध उपन्यास हैं| 'नीला चाँद' के लिए इन्हें सबसे ज्यादा सम्मान और ख्याति प्रदान की गयी| इनके इस एक उपन्यास के लिए इन्हें तीन अलग-अलग सम्मान से सम्मानित किया गया है| पहला 1991 में इन्हें 'नीला चाँद' के लिए साहित्य अकादमी सम्मान दिया गया, इसके बाद दूसरा 1992 में शारदा सम्मान और 1993 में व्यास सम्मान से सम्मानित किया गया|

**नीला चाँद (1990)**

मध्यकालीन कशी पर केन्द्रित 'नीला चाँद' 1988 में प्रकाशित शिवप्रसाद जी का तीसरा उपन्यास है| इन्होंने 'नीला चाँद' के बाद तीन और ऐतिहासिक उपन्यास लिखा| ऐतिहासिक उपन्यास का आशय समझे तो यह उपन्यास का ही एक प्रकार है जिसमें लेखक इतिहास के साक्ष्य को लेकर

तथ्य और तर्क के साथ अपनी कल्पना को प्रदर्शित करता है| आसान भाषा में समझे तो इतिहासकार घटित घटनाओं का ब्योरा तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत करता है, वहीं ऐतिहासिक उपन्यासकार घटनाओं को कल्पना से जोड़कर तथ्यों को रोचक बनाकर प्रस्तुत करता है| 'नीला चाँद' इनके द्वारा लिखा गया एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास है| जिसमें 1060 ई. की काशी को उसके सम्पूर्ण पक्षों अर्थात् उसकी ऐतिहासिकता को समेटते हुए कलात्मक रूप प्रदान किया है| इसकी विषय वस्तु उस समय के दो राजवंशों की कथा को लेकर लिखा गया है, व्यावहारिक रूप में राजा कलचुरी कर्णदेव और गाहड़वाल नरेश चंद्रदेव| उपन्यास के आरंभ में 'सिर्फ एक मिनट' शीर्षक के द्वारा लेखक मध्यकालीन सन्दर्भ को बताते हुए उपन्यास को लिखने की वजह को कुछ ऐसे प्रकट किया है - "मैं मध्यकाल की वह काशी देखना चाहता था जो विदेशी आक्रान्ताओं के पहले थी| मुझे तदनुरूप किसी ऐसे समय को ढूँढना था जिसने त्रिकंटक को भी हिला दिया हो, जहाँ 'धगद्-धगद्-धगद् ज्वलं' के भीतर नन्दीश्वर के ज्योतिर्लिंग ने विशाल स्तम्भ की तरह धरा और आकाश को जोड़ दिया हो| वह समय मिल गया, जब कर्ण कलचुरी ने देववर्मा चन्देल की हत्या की| पूरी जुझौती को रौंद कर कर्णमेरु प्रासाद में अपने चरणों द्वारा नयी विरुदावली सुनी यानी 'कालः कालंजराधिपतये' : कालंजर अधिपति का काल| गाहड़वाल कर्ण के पिता गांगेय दत्त के जमाने से ही मन मसोस कर रह गए, क्योंकि उन्होंने आवश्यक अश्वों और आरोहियों से अपने को सज्जित नहीं किया था| लक्ष्मीकर्ण ने अपने पिता की ही तरह गाहड़वालों को मामूली सामंत मानकर हमेशा दबाये रखा| उस समय की काशी है यह यानी ईस्वी 1060 की|"[22]

उपन्यास राजा कर्णदेव की अत्याचार और कीर्ति वर्मा के नैतिक आचरण और प्रजा के पालनकर्ता की कथा है| यहाँ अन्याय और अत्याचार के खिलाफ लड़ने वाले राजा कीर्ति वर्मा को लोकनायक के रूप प्रतिष्ठित किया गया है| उपन्यास में वर्णित गोड़, भील, आदिवासी और नीची जाति जैसे पात्रों की कल्पना, काल्पनिक नारी पात्र, तत्कालीन धार्मिक मत- बौद्ध वज्रयानी, तांत्रिक, नाथ-योगियों, शैवों और वैष्णवों का अंकन इसे और आदर्श रूप प्रदान करता है| कुल

मिलकर यह उपन्यास इतिहास का बखान करते हुए वर्त्तमान की संवेदना को भी अभिव्यक्त करता है| 'व्यास सम्मान' की प्रशस्ति में 'नीला चाँद' के लिए लिखा गया है कि - "शिवप्रसाद सिंह का अनुकरण नहीं किया जा सकता| वे एक साथ बेबाक ढंग से सुरूप और सौन्दर्य को, वीभत्स और विरूप को, भयानक और चमत्कारिक को साकार और जीवंत करने की कला में दक्ष हैं| वे इतिहास के स्रोतों से लेकर पुरातात्विक उत्खनन से सीधा सम्पर्क रखते हैं| शिलालेखों को जाँच कर अपनी सामग्री ग्रहण करते हैं| 'नीला चाँद' मध्ययुगीन काशी का विस्तृत फलक है|"[23]

**2. गिरिराज किशोर**

पद्मश्री से सम्मानित प्रसिद्ध रचनाकार गिरिराज किशोर का जन्म 1937 में उ.प्र. के मुजफ्फर नगर में हुआ था| उच्च शिक्षा प्राप्त गिरिराज जी कई उच्च पदों पर कार्यरत रहे है| साथ ही आपकी अनेक रचनाओं पर आपको कई तरह के सम्मान प्राप्त हैं- उ.प्र. के भारतेंदु सम्मान ('चेहरे चेहरे किसके चेहरे' नाटक पर), 'परिशिष्ट' उपन्यास पर म.प्र. साहित्य परिषद् से वीर सिंह देव पुरस्कार, 1992 में 'ढ़ाई घर' को साहित्य अकादमी सम्मान, तथा उ.प्र. हिंदी संस्थान से साहित्य भूषण सम्मान प्राप्त| साहित्य की अनेक विधा में लिखने वाले गिरिराज जी ने कुल तेरह कहानी संग्रह लिखा है| 'चार मोती बेआब', 'नीम के फूल', 'पेपरवेट', 'रिश्ता और अन्य कहानियाँ', 'शहर दर शहर', 'हम प्यार कर लें', 'जगत्तारनी' और अन्य कहानियाँ, गाना बड़े गुलाम अली खां का', 'वल्दरोजी', 'यह देह किसकी है', 'आंद्रे की प्रेमिका', 'हमारे मालिक सबके मालिक', 'दुश्मन और दुश्मन' आपके कहानी संग्रह है| 'लोग', चिड़ियाँ घर', 'यात्राएँ', 'जुगलबंदी', 'दो', 'इंद्र सुने', 'दावेदार', 'तीसरी सत्ता', 'यथा प्रस्तावित', 'परिशिष्ट', 'असलाह', 'अंतर्ध्वंस', 'ढाई घर', 'यातना घर', 'पहला गिरमिटिया' आपके उपन्यास हैं| 'नरमेध', 'प्रजा ही रहने दो', 'घास और घोड़ा', 'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे', 'केवल मेरा नाम लो', 'जुर्म आयद', 'काठ की तोप' आदि आपने प्रमुख नाटक हैं| 'बेगम गुलाम बादशाह' नाम से आपने एकांकी लिखा है| 'संवाद सेतु', 'लिखने का तर्क', 'कथ-अकथ', 'सरोकार', 'एक जनभाषा की त्रासदी', आदि आपके आलोचनात्मक कृति हैं| 'सप्तपर्णी' इनका

संस्मरण है| गिरिराज किशोर समकालीन हिंदी साहित्य में सशक्त रचनाकार के रूप प्रतिष्ठित हैं| इनका साहित्य विभिन्न विषयों को लेकर लिखा गया है जो देश की सीमा के बाहर तक जाता है| गिरिराज जी एक प्रतिष्ठित लेखक होने के साथ-साथ एक कुशल प्रशासक भी रहे|

**ढाई घर (1992)**

1991 में रिश्तों की अहमियत को केंद्र बना कर यह उपन्यास लिखा गया है| सामंती परिवेश को लेकर रचा गया यह इनका तीसरा उपन्यास है| 'लोग' और 'जुगलबंदी' इसी कड़ी की पहली पहल है| अंग्रेजी शासन अर्थात् गुलामी से लेकर आजादी के बीच समाज और रिश्तों में आये बदलाव की कहानी है 'ढाई घर'| इस उपन्यास के लेखन के सन्दर्भ को स्पष्ट करते हुए उपन्यास के आरम्भ में 'यह उपन्यास क्यों?' शीर्षक में लेखक लिखते हैं कि - "मुझे यही लगा कि अभी तो उस वातावरण और समाज के ऐसे बहुत से पक्ष बाकी हैं जिनका, नये बनते या बने समाज को समझने के लिए, सामने आना ज़रूरी है| उन बातों को मैं नहीं कहूँगा तो शायद मेरी पीढ़ी का कोई और लेखक न कहे|"[24] इस तरह लेखक रचनात्मक स्तर पर चुनौती को स्वीकार करते हुए अपने उपन्यास में पुरानी मान्यताओं एवं समाज में हो रहे नए बदलाव को एक साथ अपने लेखन में स्थान दिया है|

उपन्यास का कथा रूप चालीस वर्षीय भास्कर राय के द्वारा कहा गया है जो आत्मकथात्मक शैली को दर्शाता है| उपन्यास की रुपरेखा को स्पष्ट करते हुए परिचय में लेखक लिखते हैं कि - "यह उपन्यास नितान्त किस्सागोई है| कभी-कभी लग सकता है कि तारतम्य गड़बड़ा गया| पर ऐसा है नहीं| सूत्र अपने आप चटकते और एक-दूसरे से जुड़ते रहते हैं| यह एक लम्बी उठान वाली, टूटी-टूटी कथा है| जो एक समाज से दूसरे समाज में बदलते संबंधों को रेखांकित करती है|"[25] पात्र भास्कर राय उपन्यास में सिर्फ कथा वाचक का रोल अदा नहीं करता है बल्कि कथा की गति भी बहुत हद तक इनके व्यक्तित्व पर ही निर्भर है| उपन्यास का कथा इनके परिवार के इर्द-गिर्द ही बांध कर रखा गया है| कहानी भास्कर राय के पिता हरिराय से और उनके परिवार से शुरू होती है

और और धीरे-धीरे उसमें अंग्रेजी शासन और और उससे उत्पन्न परिस्थिति एवं गाँव के परिवेश को पूरी तरह से खोल कर आगे बढ़ता है| भास्कर राय के पिता तीन भाई हैं- जिसमें सबसे बड़े हरिराय जिनके सबसे बड़े बेटे स्वंय भास्कर राय होते है और अन्य दो भाई बहन क्रमशः अरुण और रानी हैं| हरिराय के अन्य दो भाइयों में मझला भाई कृष्ण राय हैं जो पेशे से वकील होते हैं| ये संतान उत्पन्न नहीं कर सकते जिससे इनकी पत्नी दोषी समझी जाती है और तिरस्कृत कर दी जाती है| लेकिन बाद में इनकी पत्नी अपना स्त्रीत्व सिद्ध कर सबका मुंह बंद कर देती है| और कृष्ण राय दूसरी जाति में विवाह कर निःसंतान रहकर जीवन यापन करते हैं| सबसे छोटा भाई राघव राय भी निःसंतान होता है लेकिन वो अपनी पत्नी को बहुत प्यार करते हैं| अतः अपना पूरा जीवन अपने बड़े भाई के लिए समर्पित कर देते हैं| बड़े राय का सामंती जीवन उन्हें अंग्रेजों का पिछल्ग्वा बना देता है, जिसका परिणाम यह होता है कि वो लोगों से उसी तरह पेश आते हैं जैसे अंग्रेज - "आसामी सवेरे से आना शुरू हो जाते थे| कोई पैसा का इंतजाम करके लगान रुपया, दो रुपया भर पाता था| भले ही तकादा पांच का हो उनके उस दो रूपये को जिन्हें वह इतने जतन से लाया था, ऐसे फेंक देते थे जैसे अस्पृश्य हो| रूपये चकर घिन्नी की तरह घूमते, उनका घूमना और बजना धीरे-धीरे कम होता फिर वह गिर जाते जैसे थक गए हो| आसामी उठाने के झुकता तो पीछे से दो लात लगाने के लिए मुकद्दम तैयार खड़ा रहता, लात लगते ही वह उलटे मुंह जमीन पर कुत्ते की तरह हाथ पांव सहित पसर जाता और मुंह से खून की धार बहने लगती|"[26] अपनी इन्हीं सब हरकतों की वजह से इन्हें अंग्रेज का पिट्ठू कहा जाता था, लोग इन्हें अच्छे भाव से नहीं देखते थे| साथ ही अपने बड़े बेटे को रिश्वत देकर बचा तो लेते हैं लेकिन पूरा ब्राह्मण समाज इनके खिलाफ हो जाता है| इनके सामंती शान के प्रतीक घोड़ो को जब अंग्रेज मरवा देते हैं तब उन्हें उनके द्वारा किये गए सरे अपमान एक-एककर याद आने लगता है| बाद उन्हें इस बात का एहसास होता है कि गाँधी जी कितने महान आदमी हैं - "पहले मैं गाँधी को मूर्ख और सिर-फिरा समझता था| सोचता था कि इतनी बड़ी हुकूमत के सामने वह भूख-हड़ताल, अहिंसा, सत्याग्रह जैसे

ठंडे और बोदे औजारों का इस्तेमाल करके क्या कर पाएगा| लेकिन अब मेरी समझ में आ गया कि अपने से ज्यादा ताकतवर से लड़ने का तरीका हथियार कभी नहीं हो सकते|"[27] बड़े राय अपने आखिर के दिनों में जब उनके पास दर्द के अलावा कुछ नहीं बचा था तो कहते कि - "जब इंसान में गिरकर उठने की ताकत ख़त्म हो जाए तो उसे समझ लेना चाहिए कि उसका खेल ख़त्म हो चुका है|"[28]

अतः उपन्यास 'ढाई घर' शुरू से लेकर अंत तक बदलते परिवेश से उत्पन्न स्थिति को लेकर लिखा गया है| जिसमें दो वर्ग के बीच के तालमेल स्वतंत्रता पूर्व सामंती रूप और आजादी के बाद मंत्रियों के स्वार्थी रूप को रेखांकित किया गया है| इसके अतिरिक्त एक और वर्ग था जो इन सबके विरोद्ध में खड़ा था| भास्कर राय के अनुसार बड़े राय, जगन मामा और भास्कर राय का बड़ा बेटा रघुबर क्रमशः इन्हीं प्रवृतियों का उदहारण प्रस्तुत करता है| रघुबर इस उपन्यास का दरअसल एक ऐसा पात्र है जो लेखक के आशावादी प्रवृत्ति को दर्शाता है| स्पष्ट है कि लेखक के मन में कहीं न कहीं यह उम्मीद बची हुई है कि आगे के समय के लिए एक नई क्रन्तिकारी विचारधारा की समाज को जरुरत है जो पीछे की सभी जकड़न अर्थात् राजा प्रजा की परंपरा को ख़त्म कर सकेगा|

### 3. विष्णु प्रभाकर

बहुमुखी प्रतिभा के धनी विष्णु प्रभाकर का जन्म 1912 ई. में उ.प्र. के मुजफ्फर नगर जिले के मीरापुर गाँव में हुआ था| हिंदी साहित्य में विशिष्ट स्थान रखने वाले प्रभाकर जी साहित्य की विभिन्न विधाओं में लिख कर अपनी अमिट पहचान छोड़ते है| प्रभाकर जी कहानी, नाटक, रंगमचीय एकांकी, और उपन्यास के साथ-साथ बाल साहित्य में भी अपनी कलम का जादू बिखेरते हुए नजर आते हैं| इनकी साहित्य की प्रमुख विशेषता परम्परा के साथ आधुनिकता का सामंजस्य है, जिस कारण इनके साहित्य में नए और पुराने दोनों विचार पद्धति से जुड़ाव का आभास होता है| भारतीय समाज में एक ऐसे परिवार में इनका जन्म हुआ जो कट्टर वैष्णवी था| लेकिन बाद के समय में

गाँधी जी के प्रभाव क्षेत्र में आने के बाद उनके व्यक्तित्व के साथ-साथ उनकी रचनाओं का भी रूप बदलता गया| उम्र के 17 साल में प्रवेश करते हुए उन्होंने अपना जीवन पूर्णतः देश की सेवा के लिए समर्पित करने की ठान ली| अपने देश प्रेम को लेकर खुद उन्होंने लिखा है कि - "मैंने निश्चय किया था कि अगर मैं सीधे स्वाधीनता संग्राम में भाग नहीं ले सकता तो परोक्षक रूप से जो कुछ हो सकेगा वह मैं करूँगा| बहुत सोच-समझ कर मैंने चार प्रतिज्ञाएँ ली- 1. खद्दर पहनूँगा, 2. हिन्दू- मुस्लिम एकता के लिए प्रयत्न करूँगा| 3. छूतछात की लानत मिटाने के लिए जो कुछ हो सकेगा करूँगा, और 4. हिंदी के प्रचार और प्रसार के लिए प्रयत्न करूँगा|"[29] इस तरह प्रभाकर जी ने अपना जीवन देश की सेवा में लगाने का निश्चय करते हैं, जो आगे उनके साहित्यिक योगदान के रूप में उभरकर सामने आता है| अतः इन्होंने अपने लेखन में मानवीय मूल्यों की रक्षा और इनकी सथापना को विषय बनाकर साहित्य रचा| पहली कहानी 'दिवाली के दिन' इन्होंने 1931 में अपना नाम 'प्रेमबंधु' बताकर लिखा था| इसका कारण बताते हुए विष्णु जी लिखते हैं कि - "मैंने अपनी पहली कहानी लिखी 'दिवाली के दिन' उसमें बस भाषा ही थी| शेष तो सुधारवाद की झोंक में एक जुआरी और शराबी व्यक्ति के लिए परिवार की दुर्दशा का का भावुक चित्रण था| सरकारी नौकर होने के कारण वह कहानी मैंने 'प्रेमबंधु' नाम से लिखी थी और वह नवम्बर 1931 के 'हिंदी मिलाप' के किसी रविवारीय संस्करण में प्रकाशित हुई थी|"[30] धीरे-धीरे इनकी रचनाओं में गंभीरता आने लगी और इनका लेखन एक कुशल लेखक के रूप में देखा जाने लगा| इन्होंने अबतक 300 से ज्यादा कहानियाँ लिखी हैं जो निम्नलिखित संग्रहों में प्रकाशित हुई है| 'आदि और अंत', 'रहमान का बेटा', 'जिन्दगी के थपेड़े', 'संघर्ष के बाद', 'सफर के साथी', 'खण्डित पूजा', 'साँचे और कला', 'धरती अब भी घूम रही है', 'मेरी प्रिय कहानियाँ', 'पुल टूटने से पहले', 'मेरा वतन', 'खिलौने', 'मेरी कथा यात्रा', 'एक और कुंती', 'जिन्दगी एक रिहर्सल', 'एक आसमान के नीचे', 'चर्चित कहानियाँ', 'कर्फ्यू और आदमी', 'आखिर क्यों', 'मैं नारी हूँ', 'जीवन का एक और नाम', 'ईश्वर का चेहरा', 'मेरा बेटा' आदि|

नाटक के क्षेत्र में इन्होंने कई प्रकार के विषयों को लेकर अपना लेखन कार्य किया है| इसमें लेखक ने मनोविज्ञान, इतिहास, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विषयों का चयन किया है| इनके द्वारा लिखे गए सभी नाटक इनके 14 नाट्य संकलन में संकलित हैं| 'नव प्रभात', 'समाधी', 'डॉक्टर', 'गान्धार की भिक्षुणी', 'युगे-युगे क्रांति', 'टूटते परिवेश', 'कुहासा और किरण', 'टगर', 'बन्दिनी', 'अब और नहीं', 'सत्ता के आर-पार', 'श्वेत कमल', 'केरल का क्रन्तिकारी', 'सूरदास' आदि| साथ ही इन्होंने 200 से अधिक रेडियो नाटक लिखा है|

इनके प्रसिद्ध निबंध 'जन समाज और संस्कृति', 'क्या खोया क्या पाया', 'कलाकार का सत्य', 'मेरे साक्षात्कार', 'गाँधी समय समाज और संस्कृति हैं| इनके निबंधों को विचारात्मक शैली के अंतर्गत रखा जाता है| इसके साथ कई एकांकी भी इन्होंने लिखा है| इनका पहला एकांकी 'हत्या के बाद' है| साथ ही ये अपने संस्मरण एवं जीवनी के लिए भी जाने जाते हैं| जीवनी में इनका 'आवारा मसीहा' सबसे लोकप्रिय जीवनी रहा है| जिसमें इन्होंने शरत चन्द्र के जीवन को आधार बनाकर लिखा है| इसके साथ इनका यात्रा वृत्तान्त भारतीय संस्कृति और प्रकृति का सुन्दर चित्र प्रस्तुत करता है| उपन्यास के क्षेत्र में इन्हें काफी ख्याति मिली है| इन्होंने लगभग सात उपन्यास लिखा है| 'दर्पण का आदमी', 'निशिकांत', 'तट के बंधन', 'स्वप्नमयी', 'दर्पण का व्यक्ति', 'कोई तो', 'अर्द्धनारीश्वर', और 'संकल्प' आपके प्रमुख उपन्यास हैं| 'अर्द्धनारीश्वर' के लिए आपको साहित्य अकादमी पुरस्कार से सन 1993 में सम्मानित किया गया|

**अर्द्धनारीश्वर (1993)**

1992 ई. में स्त्री देह को केंद्र में रख कर लिखा गया यह उपन्यास अपनी एक अलग पहचान बनाता है| समाज में स्त्री शारीर को लेकर लोगों की सोच पर एक करारा चोट के रूप भी इसे देख सकते हैं| तीन खंड में लिखा गया यह उपन्यास समाज में स्त्री के जीवन की स्थिति को लेकर उसको मनोवैज्ञानिक तरीके से व्याख्यायित किया है| बलात्कार की घटना को केंद्र में रखकर इस समस्या पर गहन चिंतन है यह उपन्यास| कहानी का पहला खंड 'व्यक्ति-मन' सुमिता, अजित,

तलाश एवं विभा के माध्यम से शुरू होकर आगे बढ़ता है| इसके बाद दूसरा खंड 'समाज-मन' वर्तिका का पत्र, विजय, और शिवनाथ के द्वारा कहानी को गति मिलती है और इसके बाद तीसरा एवं अंतिम खंड 'अंतरमन' आता है जिसमें विभा, शाहिदा, और अजित पात्रों को शीर्षक द्वारा अंकित कर कथा अपने अंतिम पड़ाव तक पहुँचती है| सुमिता के साथ हुए बलात्कार की घटना और पुरुषसत्तात्मक सोच वाले समाज की संरचना को लेखक अपनी कलम से स्वर देते हैं| कुल मिलकर कहानी स्त्री-पुरुष पात्रों की मानसिक यात्रा के रूप में दर्शायी गई है, जिसका लक्ष्य एक-दूसरे की दासता से मुक्ति है| अपने उपन्यास को लेकर लेखक लिखते हैं - "इसी स्वयं की दासता से मुक्ति का नाम है - 'अर्द्धनारीश्वर' आज के सन्दर्भ में 'अर्द्धनारीश्वर' की यह व्याख्या ही उपन्यास का मर्म-बिन्दु है|"[31]

**4. सुरेन्द्र वर्मा**

स्वातंत्र्योतर हिंदी साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान बनाने वाले लेखकों में से एक सुरेन्द्र वर्मा का जन्म 1941ई. में हुआ| वर्मा जी कथाकार के साथ-साथ एक प्रसिद्ध नाटककार के रूप भी पहचाने जाते हैं| कला के प्रति इनका विशेष रुझान था जो इनके लेखन में प्रतिबिंबित होता है| रंगमंच, फिल्म लाइन और इतिहास में इनकी विशेष रूचि और साहित्य के प्रति लगाव को इनके लेखन से समझा जा सकता है| साहित्य की कई विधाओं में इन्होंने लिखकर अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है| नाटक, उपन्यास, एकांकी, कविता, लेख, व्यंग आदि विधा में आपनी कलम चलाकर साहित्य को हर तरह से समृद्ध किया है| इनका साहित्य जीवन के हर पहलू को यथार्थ की भूमि पर रखकर लिखा गया है| अब तक इन्होंने दस नाटक, छः एकांकी, तीन कहानी सग्रह और चार उपन्यास लिखा है|

'प्यार की बातें', 'कितना सुन्दर जोड़ा', और 'नयी कहानियाँ' आदि इनके कहानी संग्रह हैं जिनमें इनकी सभी कहानियाँ है| सन 1972 ई. में इनके तीन नाटक प्रकाशित हुए- 'सेतुबन्ध', 'नायक खलनायक विदूषक', और 'द्रौपदी' आदि| बाद के वर्षो में इनके कई नाटक आए जिनमें

'सूर्य की अंतिम किरण से पहली किरण तक', 'आठवाँ सर्ग', 'छोटे सैयद बड़े सैयद', 'एक दूनी एक', 'एडिथ होम', 'शकुंतला की अंगूठी', 'कैद-ए-हयात' आदि| 'नींद क्यों रातभर आती नहीं' इनका एकांकी संग्रह है जिसमें छः एकांकी संकलित हैं, जो इस प्रकार हैं- 'शनिवार के दो बजे', 'वे नाक से बोलते हैं', 'हरी घास पर घंटे भर', 'मरणोपरांत', 'नींद क्यों रात भर आती नहीं', और 'हिंडोल इंगूर' आदि| 'जहाँ बारिश न हो' इनका व्यंग साहित्य है| वर्मा जी ने कुल चार उपन्यास लिखे हैं- 'अँधेरे से परे', 'मुझे चाँद चाहिए', 'दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता', एवं 'काटना शमी का वृक्ष पद्म पंखरी की धार से'| 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास के लिए इन्हें काफी सराहा गया और साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया|

पुरस्कार के क्षेत्र में इन्हें अब तक केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी, साहित्य अकादमी, व्यास सम्मान, एवं भारतीय भाषा परिषद् द्वारा सम्मानित किया गया है|

**मुझे चाँद चाहिए (1996)**

'मुझे चाँद चाहिए' 1993 ई. में लिखा गया इनका दूसरा एवं महत्त्वपूर्ण उपन्यास है| लेखक ने विषय वस्तु के तौर पर स्त्री की मुक्ति के प्रश्न को आधार बनाकर लिखा है| उपन्यास का केन्द्रीय पात्र नायिका 'वर्षा वशिष्ठ' है| यह उपन्यास एक महत्वाकांक्षी कलाकार वर्षा की संघर्ष की कथा है, जो समाज और परिवार के दोहरे स्तर से होकर गुजराती है| पहले वह परिवार और समाज से लड़ती हुई अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती है, फिर इतने प्रतिकूल परिवेश से लड़ने के बाद उसकी दूसरी लड़ाई एक कलाकार के रूप में खुद को साबित करने की होती है, जहाँ उसे अपनी प्रतिभा और क्षमता को भी प्रमाणित करना पड़ता है| इसके अलावा वर्षा का निजी संबंध भी बहुत कुछ झेलता हुआ आगे बढ़ता है| प्रेमी हर्ष का आत्महत्या कर लेना वर्षा के जीवन का सबसे कमजोर क्षण में से है| बाद के समय में असंभव को साधते हुए वर्षा अपने जीवन के उस सार तक पहुँचती है जहाँ उसे उसका चाँद मिलता है| अंततः वर्षा यह मानती है कि आत्महत्या कोई समाधान नहीं है| उसकी दृष्टि में एक चीज जो साफ हो चुकी है वह है कि जिन्दगी हर उस चीज से बड़ी है

जिसका सपना लिए लोग बुलंदियों तक पहुँचना चाहते हैं| इस उपन्यास की समीक्षा करते हुए श्याम कश्यप लिखते हैं कि - "जीवन-यथार्थ की गहरी सूझ-बूझ के साथ कलात्मक चित्रांकन में सूक्ष्म से सूक्ष्म 'डिटेल्स' का सटीक वर्णन और भाषा से लेकर गद्य-शैली तक हिंदी को लगभग एक नया संस्कार देने की उनकी कोशिश, सर्वोपरि सुरेन्द्र वर्मा की सकारात्मक जीवन-दृष्टि उन्हें निर्विवाद रूप से एक बड़ा लेखक एवं सक्षम कलाकार साबित करती है|"[32]

**5. विनोद कुमार शुक्ल**

विनोद कुमार शुक्ल का जन्म 1937 को म.प्र. के राजनांदगांव में हुआ था| माता-पिता की असमय मृत्यु से उनका बचपन संकटों में गुजरा| जिसके बाद इनका जीवन चाचा पं. किशोरीलाल के संरक्षण में पला बढ़ा| बाद के दिनों में पढाई पूरी करने के पश्चात् वे इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर में सहायक प्राध्यापक के रूप में अपना कार्यभार संभाला और एसोसिएट प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्त हुए| कविता के प्रति विशेष लगाव और मुक्तिबोध का साथ इनकी काव्य प्रतिभा को एक दिशा प्रदान किया| इनकी कविता समकालीन समय में अपनी अप्रतिम छाप छोड़ती हुई नजर आती है| शुक्ल जी बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में एक ऐसे लेखक के रूप उभरते हैं जो अपने लेखन में यथार्थ और प्रयोगधर्मिता को अपनी कल्पनाशीलता के द्वारा उसे गहराई से समझा| लेखन के क्षेत्र में इनका पहला प्रयोग कविता विधा में देखा गया है| इनकी पद्य विधा को देखते हुए अरविन्द त्रिपाठी लिखते हैं - "इनकी कविता समकालीन कविता के दृश्य पर समकालीन जीवनानुभव को प्राचीनता से, प्रकृति से मनुष्य को जिस तरह उद्घाटित करती है उससे कविता की एक दूसरी दुनिया की खिड़की खुलती है| इस दुनिया को देखने के लिए उनकी जैसी अतिरिक्त देखने की दृष्टि और कला चाहिए|"[33] अतः गद्य और पद्य दोनों विधा में इनकी प्रयोगधर्मिता को बराबर से देखा जा सकता है| 'लगभग जयहिंद', 'वह आदमी नया कोट पहिनकर चला गया, विचार की तरह', 'सब कुछ होना बचा रहेगा', 'अतिरिक्त नहीं', 'कविता से लम्बी कविता' इनके प्रमुख काव्य संग्रह है| इनका पहला काव्य संग्रह 1971 में प्रकाशित हुआ| इनके अब तक चार उपन्यास- 'नौकर की

कमीज', खिलेगा तो देखेंगे', 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' और 'हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बौना पहाड़' प्रमुख हैं| इनके द्वारा गद्य में लय तत्व का प्रयोग चली आई परंपरा से हटकर नया रूप अख्तियार करता है| उपन्यास में इनके द्वारा प्रस्तुत नए प्रतिदर्श को देखा जा सकता है| अब तक इन्हें इनके लेखन कार्य के लिए कई तरह के सम्मानों से सम्मानित किया गया जिनमें वीरसिंह देव पुरस्कार, सृजन भारती सम्मान, रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार, दयावती मोदी कवि शिखर सम्मान, भवानीप्रसाद मिश्र पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, पं. सुंदरलाल शर्मा पुरस्कार, एवं साहित्य अकादमी सम्मान शामिल है| 1997 में प्रकाशित 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' के लिए इन्हें 1999 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है|

**दीवार में एक खिड़की रहती थी (1999)**

साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित इस उपन्यास का विषय वस्तु एक साधारण निम्न मध्यवर्गीय रघुवर प्रसाद और उनकी पत्नी सोनसी की कथा है| उपन्यास को छः शीर्षक के द्वारा लिखा गया है| शीर्षकों के चयन में बिम्बों का सुन्दर प्रयोग और कथा सार दोनों को एक साथ देखा गया है| शीर्षक को पढ़ने भर से उसकी प्रवृत्ति को आसानी से समझा जा सकता है| उपन्यास का पहला शीर्षक- 'हाथी आगे-आगे निकलता जाता था और पीछे हाथी की खाली जगह छूटती जाती थी', दूसरा- 'दृष्टि के जल से बुझकर सूर्य चन्द्रमा हो गया था| और अल्पना का बना हुआ कमल पानी में तैर रहा था|', तीसरा शीर्षक- 'दोनों जागे थे| और सबकुछ नींद में झूम रहा था| तालाब नींद में तालाब था| आकाश नींद का आकाश था|' चौथा शीर्षक- 'पेड़ों के हरहराने की आवाज़ में चिड़ियों के चहचहाने की आवाज़ बैठी थी', पांचवा शीर्षक- 'रात के बीतने से जाता हुआ अंधेरा शायद हाथी के आकर में छूट गया था| ज्यों ज्यों सुबह होगी हाथी के आकार का अंधेरा हाथी के आकार की सुबह होकर बाकी सुबह में घुलमिल जाएगी|', आखिरी छठा शीर्षक- 'रात भर अंधेरे का इतना साथ था कि दिन का उजाला बहुत उजाला लग रहा था| लगा कि एक सूर्य से इतना उजाला नहीं हो सकता, दो सूर्य होंगे|' है| सिर्फ शीर्षक ही नहीं पूरा उपन्यास इसी तरह की रोचकता लिए

हुए लेखक की लेखन कला को दर्शाता है| मानव जीवन में खुशी का आधार वस्तु या समृद्धि नहीं होता बल्कि एक अच्छा और सुखी जीवन अभाव में भी जिया जा सकता है| ऐसी ही अभाव भरी जिन्दगी रघुवर प्रसाद की भी है लेकिन इस जीवन के प्रति किसी तरह की शिकायत भी नहीं है| महाविद्यालय में बतौर गणित के अध्यापक प्रसाद को आठ सौ रूपये मासिक वेतन मिलता है| इससे वह अपने पूरे परिवार की देखभाल करता है| एक कस्बाई जीवन शैली में इनके दाम्पत्य प्रेम की कथा का खुबसूरत तस्वीर भी लेखक प्रस्तुत करता है| पूरा उपन्यास ऐसे ही एक सामान्य जीवन की कथा है जिसमें पात्र अपने मन की खिड़की से उस पार जाते हैं जो बिलकुल जादुई है| यह एक ऐसी दुनिया थी जिसमें जाने के बाद उन्हें खुशी मिलती है| उपन्यास में कहीं भी किसी तरह का कोलाहल या कुछ ऐसा नहीं दिखता जिससे उसकी प्रकृति बार-बार बदलती हुई दिखे| सामान्य भूमि पर लिखी गयी सामान्य जीवन की कथा का सजीव चित्रण यहाँ देखते ही बनता है| इस सन्दर्भ में विष्णु खरे लिखते हैं - "विनोद कुमार शुक्ल के इस उपन्यास में कोई महान घटना, कोई विराट संघर्ष, कोई युग सत्य तथा कोई उद्देश्य या संदेश नहीं है क्योंकि इसमें वह जीवन, जो इस देश की वह जिन्दगी है जिसे किसी अन्य उपयुक्त शब्द के अभाव निम्नमध्यवर्गीय कहा जाता है|"[34] साथ ही उपन्यास में व्यक्त दाम्पत्य जीवन के अमांसल प्रेम का इतना मनमोहक एवं सुन्दर चित्र और कहीं नहीं देखा गया है| उपन्यास के 'अनुकथन' में विष्णु खरे इस सन्दर्भ में लिखते हैं कि - "प्रदर्शनवाद से बचते हुए इसमें उन्होंने ऐंद्रिकता, माँसलता, रति और श्रृंगार के ऐसे चित्र दिए हैं जो बगैर उत्तेजक हुए आत्मा को इस आदिम संबंध के सौंदर्य से समृद्ध कर देते हैं, और वे चस्पाँ किए हुए नहीं हैं बल्कि नितांत स्वाभाविक हैं-उनके बिना यह उपन्यास अधूरा, अविश्वसनीय, वंध्य होता| बल्कि आश्चर्य यह है कि उनकी कविता में यह शारीरिकता नहीं है|"[35]

## 1.3 2001-2010 के मध्य पुरस्कृत हिंदी उपन्यास

### 1. अलका सरावगी

बहुमुखी प्रतिभा की धनि अलका सरावगी जी का जन्म 17 नवम्बर 1960 को कोलकत्ता के एक मारवाड़ी परिवार में हुआ था| अलका जी की शादी बीस साल की उम्र में हो गई थी, विवाह के काफी समय पश्चात् उन्होंने एम.ए. और पी.एच.डी.की उपाधि प्राप्त की| इन्होंने 'रघुवीर सहाय की कविताओं' पर अपना शोध कार्य किया| लिखने की प्रेरणा अलका जी को कई लोगों से मिली है, जिसकी शुरूआत का श्रेय वो स्कूल के दिनों की एक छोटी घटना को देती हैं जिसने उन्हें लिखने के लिए अभिप्रेरित किया| साहित्य में लेखन कार्य शुरू करने से पहले आपने स्वास्थ और महिलाओं के मुद्दों पर अखबारों में लेख लिखा| आप अपने लेखन कार्य का मुख्य स्रोत अपनी दादी को मानती हैं, जिन्होंने आपको अपने समय के समुदाय और गाँव के अतीत की कहानी सुनाया करती थी| अलका जी ने अपना लेखन-यात्रा 1990 में 'आपकी हँसी' नामक कहानी लिखकर शुरू की| आपने उपन्यास, कहानी, नाटक के साथ-साथ अनुवाद और लेख भी लिखा है, किन्तु कथा-साहित्य में आपका विशेष योगदान दिखलाई पड़ता है| आपके प्रकाशित साहित्य का विवरण इस प्रकार है-

**कहानी संग्रह-**

. 'कहानी की तलाश में' (1996 ई.)

. 'दूसरी कहानी' (2000 ई.)

**नाटक-**

. 'कलकत्ते में कर्फ्यू' (1993 ई.) नटरंग मैगजीन में प्रकाशित

**अनुवाद-**

. 'तेरह हलफ़नामे' (2022)

यह किताब भारत की ग्यारह भाषाओँ की लेखिकाओं की सशक्त कहानियों का अनुदित संग्रह है|

**उपन्यास-**

. 'कलि-कथा : वाया बाइपास' (1998 ई.)

. 'शेष कादम्बरी' (2001 ई.)

. 'कोई बात नहीं' (2004 ई.)

. 'एक ब्रेक के बाद' (2008 ई.)

. 'जानकीदास तेजपाल मैनशन' (2015 ई.)

. 'एक सच्ची झूठी गाथा' (2018 ई.)

. 'कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए' (2020 ई.)

. 'गाँधी और सरला देवी चौधरानी' : बारह अध्याय' (2023 ई.)

**पुरस्कार एवं सम्मान-**

. 'कलिकथा वाया बाइपास' के लिए 1998 में श्रीकांत वर्मा पुरस्कार से सम्मानित|

. 'कलिकथा वाया बाइपास' के लिए 2001 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित|

. 'शेष कादम्बरी' के लिए बिरला फाउंडेशन के बिहारी पुरस्कार से सम्मानित|

. 'जानकीदास तेजपाल मैनशन' के लिए अंतराष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान प्राप्त|

. 'कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए' के लिए कलिंगा लिटफ़ेस्ट का बुक ऑफ द इयर सम्मान प्राप्त|

. आपके तीन उपन्यासों के इतालवी भाषा में प्रकाशित होने पर इन्हें इटली सरकार द्वारा 'ऑडर ऑफ़ द ऑफ़ इटली कैबेलियर' का सम्मान प्राप्त|

**कलिकथा-वाया : बाइपास (2001)**

दो पुरस्कारों द्वारा सम्मानित उपन्यास 'कलिकथा : वाया-बाइपास' की विषय वस्तु मारवाड़ी परिवार की छः पीढ़ियों के माध्यम से किशोर बाबू के जीवन की तीन अवस्था की कथा है| कई तरह की घटनाओं और विषयों को लेकर लिखा गया यह एक विचार प्रधान उपन्यास है| साथ ही उपन्यास मारवाड़ी परिवार के माध्यम से भारतीय पुरुष मानसिकता की कथा है, जिसमें उस समय की कई

तरह की विचारधारा को भी साथ-साथ सम्मिलित किया गया है| उपन्यास में समकालीन भारतीय समस्याओं को भी यहाँ बारीकी से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है| लेखिका यहाँ इतिहास और वर्त्तमान को एक साथ एक ही भूमि पर रखकर समझाने का प्रयत्न करती हैं| आजादी की लड़ाई के कई किस्से, छपनीय अकाल से उत्पन्न स्थिति, विश्वयुद्ध का परिणाम, गाँधीजी की हत्या, साम्प्रदायिक हिंसा का माहौल, पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों की दशा, एवं अमीचंद मारवाड़ी और अंग्रेज की सांठगांठ आदि का यथार्थ चित्र उपन्यास में कथा को गति प्रदान करता है| उपन्यास में किशोर बाबू की बाईपास सर्जरी आज के आधुनिक युग को रेखांकित करती है|

**2. कमलेश्वर**

नयी कहानी और समांतर कहानी आन्दोलन के प्रवर्तक कमलेश्वर प्रसाद का जन्म 1932 में उ.प्र. के मैनपुरी कस्बे के कटरा मुहल्ले में हुआ| आपकी साहित्यिक प्रतिभा न सिर्फ कथा साहित्य में देखी गई है अपितु संपादक, दूरदर्शन के महानिर्देशक, पत्रकारिता, फिल्मी पटकथा लेखन में बराबर देखने को मिलता है| आम आदमी के पक्षधर कमलेश्वर अपने लेखन में जीवन के भोगे हुए यथार्थ को अपने अनुभव द्वारा प्रस्तुत करते हुए नजर आते हैं| हिंदी कहानी को नयी दिशा देने वाले कमलेश्वर जी ने अब तक अनेकों कहानियाँ लिखी है| इनके प्रमुख कहानी संग्रह- 'राजा निरबंसिया', 'कस्बे का आदमी', 'मांस का दरिया', 'खोई हुई दिशाएं', 'बयान', 'जिन्दा मुहावरे', मेरी प्रिय कहानियाँ' आदि| इनकी सभी कहानियाँ सामान्य लोगों के जीवन की कथा है| साथ ही आपने कई उपन्यास लिखकर साहित्य को और समृद्ध किया है| 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'डाक बंगला', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', 'काली आँधी', 'तीसरा आदमी', 'आगामी अतीत', 'वही बात', 'सुबह दोपहर शाम', 'रेगिस्तान', 'अनबीता व्यतीत', 'अम्मा', 'कितने पाकिस्तान', 'एक और चंद्रकांता', अंतिम सफर' आदि उपन्यास आपकी लेखन प्रतिभा के द्वारा साहित्य को दिया गया सुन्दर योगदान है| 'नयी कहानी की भूमिका', 'मेरा पन्ना', 'नई कहानी के बाद', 'दलित साहित्य की भूमिका', 'बंधक लोकतंत्र' आदि आपके आलोचनात्मक कृति हैं| 'जो मैंने जिया', 'यादों

के चिराग', 'जलती हुई नदी' आपके आत्मकथा हैं| कमलेश्वर जी आत्मकथात्मक साहित्य को आधार शिलाएँ मानते हैं| 'अपनी निगाह में', 'गर्दिश के दिन' आपके संस्मरण है| 'खण्डित यात्राएँ', आखों देखा पाकिस्तान', 'कश्मीर रात के बाद', देश-देशांतर' आदि आपके यात्रा संस्मरण हैं| आपने कुछ नाटकों की भी रचना की है जो इस प्रकार है- 'अधूरी आवाज', 'हिन्दोस्तां हमारा', रेगिस्तान' आदि| 2000 ई. में लिखा गया उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' को साहित्य अकादमी पुरस्कार सम्मान से सम्मानित किया गया है|

**कितने पाकिस्तान (2003)**

"इन बंद कमरों में मेरी साँस घुटी जाती है

खिड़कियाँ खोलता हूँ तो ज़हरीली हवा आती है|"[36]

सन 2003 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यह उपन्यास लेखक की एक लम्बी अंतर्यात्रा का परिणाम है| इतिहास और समय को केंद्र में रखकर लिखा गया यह उपन्यास समाज के गहरे में बसा हुआ अमानवीय और नफरती सोच को रेखांकित करता हुआ कथा गढ़ता है| समाज के घृणित रूप अर्थात् इंसानी बंटवारे को बताते हुए लिखते हैं - 'अदीबे आला ! वक्त न हिन्दू है, न मुसलमान...इतिहास गवाह है कि रजवाड़ों और सल्तनतों के लोग हिन्दू या मुस्लमान तो थे लेकिन इनके स्वार्थों और महत्त्वाकांक्षाओं ने ही इन लोगों को और ज्यादा हिन्दू या मुस्लमान बनाया था|"[37] पांच हजार वर्ष के इतिहास को समेट कर लिखा गया यह उपन्यास हर समय के शासक और युद्ध से उत्पन्न स्थिति और मानवता के असली रूप को बयां करता है| आदिकाल, आर्यों का आगमन और आक्रमण, मोहनजोदड़ो-हड़प्पा सभ्यता, वेदों में असुरों से युद्धों की चर्चा, महाभारत की कथा, आर्यना के डेरियस और यूनानी मिलिडयाडीस का मैराथन के मैदान में हुआ युद्ध, झेलम, कैने सोमनाथ, तराईन, क्रेसी, पानीपत जैसे युद्धों का वर्णन करने के पीछे की वजह कश्मीर के आतंकवाद और अयोध्या की बाबरी मस्जिद विवाद, शालिनी अग्निकांड जैसे तमाम

घटनाओं को जाता है| उपन्यास की भूमिका में लेखक इतने लम्बे इतिहास को लिखने के पीछे के सन्दर्भ को कुछ ऐसे लिखते हैं - "यह उपन्यास मन के भीतर लगातार चलने वाली एक जिरह का नतीजा है| ...इन ऐसी तमाम रचनाओं, विचारों, इतिहास की सैकड़ो सर्जनात्मक दस्तकों और व्यवधानों के बीच रुक-रुक कर 'कितने पाकिस्तान' का लिखा जाना चलता रहा|"[38] उपन्यास का मूल किसी भी तरह के युद्ध की आलोचना करना है| इसे उपन्यास के इस सन्दर्भ के समझा जा सकता है- "कमलेश्वर का यह उपन्यास मानवता के दरवाज़े पर इतिहास और समय की एक दस्तक है... इस उम्मीद के साथ कि भारत ही नहीं, दुनिया भर में एक के बाद एक दूसरे पाकिस्तान बनाने की लहु से लथपथ यह परंपरा अब खत्म हो...|"[39]

**3. मनोहर श्याम जोशी**

मनोहर श्याम जोशी का जन्म 1933 ई. को राजस्थान के अजमेर नामक शहर में मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था| व्यावसायिक दुनिया में प्रवेश कर सन 1952-53 के दौरान दिल्ली आकर रोजी-रोटी के लिए पत्र-पत्रिकाओं में लेखन कार्य किया| इसके पांच वर्ष बाद सुमित्रानंदन पंत जी ने इन्हें असिस्टेंट प्रोड्यूसर बनवाया| जहाँ केन्द्रीय सूचना सेवा में पटकथा-लेखन एवं भाष्य लेखन कार्य के तौर पर इनकी नियुक्ति हुई| इसके साथ ही अंग्रेजी हिंदी अनुवाद और पत्र-पत्रिकाओं एवं टेलिविजन धारावाहिकों के लिए भी आप लेखन कार्य करते रहे| साथ ही मनोहर जी ऑल इण्डिया रेडियों आकाशवाणी में निरंतर कार्यरत रहे| जोशी जी का समग्र व्यक्तित्व उनके विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, समाचार लेखन द्वारा ही अपनी पहचान की नींव रखता है| जोशी जी के जीवन में साहित्य सृजन का आविर्भाव उनके पारिवारिक वातावरण को जाता है| इसके आलावा अमृतलाल नगर जी की किस्सागोई भाषा, यशपाल की वैचारिकी, कृष्ण नारायण कक्कर की बौद्धिकता को जाता है| जोशी जी ने अपने साहित्य लेखन के लिए नए मापदंड बनाये| जिसमें मनुष्य जीवन की सभी समस्याएँ शामिल की गई| सभी सहित्यकार को अपने अनुकूल माहौल में लिखने की आदत होती है| इस संबंध में जोशी जी लिखते हैं की - "अलग-अलग लोगों का लेखन का ढंग अलग-

अलग होता है| मोहन राकेश, कृष्णा सोबती को लिखने के लिए एकांत जरूर लगता रहा है| मुझे एकांत में लिखा नहीं जाता| नियंत्रित शौर चाहिए हमें, जब चाहें हो, जब चाहें न हो| जब यूनिवर्सिटी में था और लेखक हो गया था, तब रेस्तरां के पीछे जाकर लिखता था| गाना जोर से बजवाते और लिखते|"[40] रोजगार की तलाश ने जोशी जी को साहित्य लेखन के लिए सबसे ज्यादा प्रेरित किया|

जोशी जी ने अपना लेखन कार्य उपन्यास 'अंत और आदि' से किया जो अधूरा होने की वजह से प्रकाश में नहीं आया| इसके बाद इन्होंने अनेक उपन्यास लिखे जो इस प्रकार हैं- 'कुरु-कुरु स्वाहा', 'कसप', 'टा-टा प्रोफेसर', 'हरिया हरक्यूलीज की हैरानी', 'हमजाद', 'क्याप', 'कौन हूँ मैं', 'कपीश जी', 'वध स्थल', 'गिनुआ', 'ई बांधवा ऊ बांधवा', 'किस्सा पौने चार का' आदि| 'नेताजी कहिन', 'उस देश का यारों क्या कहना' इनकी व्यंग रचनाएँ हैं| 'बातों बातों में' इनका साक्षात्कार है| 'लखनऊ मेरा लखनऊ' इनका संस्मरण और 'पश्चिमी जर्मनी पर उड़ती नजर', 'क्या हाल हैं चीन के' यात्रा संस्मरण है| साथ इन्हें इनके लेखन कार्य कुशलता के लिए कई तरह के पुरस्कारों से सम्मानित भी किया गया है| जिसमें इनके द्वारा 2001 ई. में लिखा गया उपन्यास 'क्याप' को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त है|

**क्याप (2005)**

सन 2005 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यह उपन्यास उनके जीवन काल में प्रकाशित उनका अंतिम उपन्यास था| वैसे तो क्याप शब्द का कोई अर्थ नहीं होता है लेकिन जोशी जी ने इसका अर्थ 'अजीब, बेकार, अनदेखा, निराशाजनक' के रूप में लिया है| उपन्यास में इसके अर्थ की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि - "पूर्व काल में हम जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं के लिए ही जुगाड़ करते थे, शेष हम अपनी कल्पना में या से पा लेते थे| यह आकांक्षाहीनता हमें बाहर वालों की दृष्टि में 'क्याप' ठहराती थी| क्याप का कोई समानार्थी नहीं है हिंदी में और क्याप के अर्थ भी कई-कई बताने होंगे हिंदी में- अजीब-सा, अनगढ़-सा, बेकार-सा, अनदेखा-सा, निराशाजनक तथा अप्रत्याशित-सा बहुत कुछ आ जाता है 'क्याप' की श्रेणी में|"[41] इस उपन्यास

का मूल स्वर मनुष्य-मनुष्य के बीच पनप रहे जातिगत भेदभाव से जुड़ी समस्याओं को शब्दबद्ध करना है| आज के उत्तर-आधुनिक समय में अधकचरी बौद्धिकता से उत्पन्न जानलेवा स्थिति ने लोगों को और ज्यादा हिंसक अर्थात् गुण्डा बना दिया है| 'क्याप' ऐसी ही आधी-अधूरी सोच रखने वालों की कथा है| आज भी दलित और स्त्री समाज में सवर्ण और पुरुष की बराबरी नहीं कर पा रहे हैं यही ज्वलंत समस्या इसमें प्रमुखता के साथ उठाया गया है| उपन्यास में इस परिदृश्य को कुछ ऐसे दिखाया गया है - "मैं इस तरह की समुचित व्यवस्था का तब तक आदी हो चुका था और इस बात को जान चुका था कि कांग्रेसी सवर्णों ने हम डूमों को समानता का दर्जा सैद्धान्तिक रूप में दिया है, व्यावहारिक रूप में नहीं| उनके पास हमेशा यह सफ़ाई रही है कि हम तो नहीं मानते लेकिन बुजुर्ग मानते हैं, और घर की स्त्रियाँ मानती हैं|"[42] पुरुषोत्तम अग्रवाल उपन्यास पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि - "यथार्थ चित्रण के नाम पर सपाटे से सपाटबयानी और फार्मूलेबाजी करने वाले उपन्यासों/ कहानियों से भरे इस वक्त में, कुछ लोगों को शायद लगे कि 'मैं' और उत्तरा के प्रेम की कहानी, और कुछ नहीं बस, 'खलल है दिमाग का', लेकिन प्रवचन या रिपोर्ट की बजाय सर्जनात्मक स्वर सुनने को उत्सुक पाठक इस अद्भुत 'फसक' में अपने समय की डरावनी सचाइयों को ऐन अपने प्रेमानुभव में एकतान होते सुन सकता है| बेहद आत्मीय और प्रामाणिक ढंग से| गहरे आत्ममंथन, सघन समग्रता बोध और अपूर्व बतरस से भरपूर 'क्याप' पर हिंदी समाज निश्चय ही गर्व कर सकता है|"[43] अतः यह उपन्यास जाति, धर्म, स्वार्थ, भ्रष्ट राजनीति, संकीर्ण सांप्रदायिक दायरे में सिमटा हुआ आदर्शहीन समाज की झांकी प्रस्तुत करता है|

**4. अमरकांत**

किसी भी साहित्यकार के सर्जनात्मक व्यक्तित्व निर्माण के पीछे जीवन के महत्त्वपूर्ण पक्ष होते हैं, जो व्यक्ति को सर्जनात्मकता प्रदान कर उसे सामान्य से विशिष्ट बनाता है| जिसके पीछे उनका भोगा हुआ यथार्थ होता है| अमरकांत का जन्म सन 1925 ई. में बलिया के भगमलपुर गाँव में हुआ था| अमरकांत के साहित्य में योगदान को देखते हुए इन्हें यथार्थवादी रचनाकार की श्रेणी में

रखकर देखा जाता रहा है| आधुनिक समय में क्षीण होती मानवीय संवेदना एक चिंतनीय विषय है| अमरकांत अपने लेखन में ऐसे ही पात्रों का चुनाव करते हैं जो आज के यथार्थ को सटीकता से प्रकट कर सके| साहित्य में यथार्थवादी दृष्टि से अभिप्राय रचनाकार की अपनी भौतिकवादी-वैज्ञानिक चिंतन और ज्ञान के आधार पर सामाजिक जीवन की वास्तविकता का सच्चा रूप दिखा सके| ऐसी दृष्टि लेखक को न सिर्फ यथार्थवादी बनाती है, बल्कि उन्हें भाववादी-आदर्शवादी मूल्यों, कलावाद तथा अमुर्तिकरण के खतरों से भी मुक्त करती है|

अमरकांत का व्यवसायिक जीवन एक पत्रकार के तौर पर शुरू होता है| सन 1948 में उन्होंने आगरा के दैनिक पत्र 'सैनिक' पत्र के संपादकीय के तौर पर कार्य प्रारंभ किया| इसके बाद 1950 में इलाहाबाद के 'अमृत पत्रिका' नामक 'दैनिक भारत' और मासिक पत्रिका 'कहानी' के संपादक के रूप में काम किया| संप्रति मनोरमा इलाहबाद के संपादकीय विभाग में कार्यरत रहते हुए सेवानिवृत हुए| साहित्य के प्रति उनका लगाव ऐसा था कि वो विपरीत परिस्थिति में भी निरंतर लिखते रहे| बीमारी और बेकारी के दौरान ही उन्होंने 'दोपहर का भोजन' और 'डिप्टी कलेक्टरी' कहानी लिखी| 'दोपहर का भोजन' में तो उन्होंने समाज में फैली आर्थिक कमी के माध्यम से अपनी आर्थिक विपन्नता को दर्शाया हो ऐसा मालूम पड़ता है|

अमरकांत जी ने साहित्य की अनेक विधाओं में लिखकर साहित्य में बड़ा योगदान दिया है| साहित्य जगत में आप कहानीकार के रूप में विख्यात है| आपके प्रमुख कहानी संग्रह इस प्रकार है- 'जिन्दगी और जोंक', 'देश के लोग', 'मौत का नगर', 'मित्र-मिलन तथा अन्य कहानियाँ', 'कुहासा', 'तूफान', 'कलाप्रेमी', 'प्रतिनिधि कहानियाँ', 'एक धनि व्यक्ति का बयान', 'सुख और दुःख का साथ', 'जाँच और बच्चे' आदि| आपने उपन्यास विधा से भी साहित्य को उतना ही संपन्न किया है| 'सूखा पत्ता', 'ग्राम सेविका', 'सुख जीवी/ पराई डाल का पंछी', 'कंटीली राह के फूल', 'आकाश पक्षी', 'बीच की दीवार', 'काले-उजले दिन', सुन्नर पांडे की पतोह', 'इन्हीं हथियारों से', 'लहरें', 'विदा की रात' आदि आपके उपन्यास हैं| 'कुछ यादें : कुछ बातें' और 'दोस्ती' आपके

संस्मरण है| आपका 2003 ई. में प्रकाशित उपन्यास 'इन्हीं हथियारों से' के लिए 2007 में साहित्य अकादमी और व्यास सम्मान प्राप्त हुआ| 'सूखा पत्ता' के लिए सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार, एवं 'मौत का नगर' कहानी के लिए यशपाल पुरस्कार दिया गया|

**इन्हीं हथियारों से (2007)**

साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यह उपन्यास स्वाधीनता आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है| सन 1942 के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान उ.प्र. के गाँव बलिया में कुछ समय के लिए ब्रिटिश शासन समाप्त हो गया था इसी समय को आधार बनाकर लेखक ने कथा गढ़ा है| इस उपन्यास में आम आदमी की सक्रिय भूमिका तथा उसकी पृष्ठभूमि को भी यहाँ दिखाया गया है| उपन्यास में किसी एक को नायक के तौर पर नहीं दिखाया गया है, यहाँ सबकी अपनी विशिष्टता है| यह उपन्यास स्वाधीनता आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर जरूर लिखा गया है, साथ ही उपन्यास में गाँधी जी, नेहरु, भगत सिंह, नेताजी, मौलाना आजाद, जयप्रकाश नारायण, एवं लोहिया जैसे आंदोलनकारियों का किरदार सिर्फ सूचना देने तक है| इसलिए यह ऐतिहासिक रचना के दायरे में नहीं आता है| इसे स्वयं अमरकांत जी स्पष्ट कर लिखते हैं - "यह ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है, बल्कि उस आन्दोलन से जुड़े व्यक्तियों के निजी अनुभवों, ऐतिहासिक घटनाओं तथा बयालीस से स्वतंत्रता प्राप्ति तक के समय की एक यथार्थवादी कल्पना है| वस्तुतः बयालीस के बहाने, एक कल्पित कथा के द्वारा इस ऐतिहासिक ज़माने का स्मरण किया गया है, जब देश की जनता में स्वाधीनता के लिए विदेशी हुकूमत के विरुद्ध बगावत का झंडा उठाते हुए जबरदस्त संघर्ष किया, अनगिनत कुर्बानियां दी और भयंकर दमन का सामना किया|"[44]

उपन्यास में ऐसे कई पात्र हैं जिन्हें स्वतंत्रता सैनानी नहीं कहा जा सकता जो लड़ाकू नहीं है एक सामान्य जीवन जीने वाले लोग है| इन पात्रों में नीलेश छात्र है, गोवर्द्धन व्यापारी, पहलवान डाकू, नम्रता जमींदार की बेटी, भगजोगनी फल बेचनेवाले की पत्नी, रमाशंकर कार्यकर्त्ता, हरचरण मजदूर, गोपालराम दलित, ढेला वेश्या पुत्री आदि है| ये सभी संपन्न परिवार के द्वारा दबाये गए

लोग हैं, जिन्हें उम्मीद है कि आजादी के बाद उनकी स्थिति में सुधार जरूर होगा| इस वजह से सभी अपनी-अपनी क्षमताओं के अनुसार आजादी में अपना योगदान देते हैं| अतः उपन्यास का नायक कोई पात्र नहीं बल्कि गाँव बलिया है| उपन्यास के सन्दर्भ में अरुण प्रकाश लिखते हैं - "अमरकांत भविष्य में झाँकने की अपनी क्षमता के लिए भी प्रसिध्द रहे हैं| इस उपन्यास में वे उस गौरवशाली अतीत के चित्रण और विश्लेषण को लेकर उपस्थित हुए हैं जो भविष्य का पाथेय हो सकता है| उन्हीं मामूली हथियारों से जनता बड़ी लड़ाई जीत लेगी, यही विश्वास इस उपन्यास का बीज-सूत्र है|"[45]

**5. गोविन्द मिश्र**

हिंदी के वरिष्ठ कथाकारों में से एक गोविन्द मिश्र जी का जन्म 1939 को अतर्रा (बाँदा) में हुआ| मिश्र जी हिंदी साहित्य में एक सशक्त उपन्यासकार और यशस्वी कहानीकार के रूप में जाने जाते रहे हैं| 1957 में हिंदी साहित्य सम्मलेन प्रयाग की विशारद परीक्षा पास कर 1959 में अंग्रेजी विषय में एम.ए. किया| कई तरह की भाषाई ज्ञान उनके लेखन में ओज और प्रवाह लाने का काम किया है| तीन वर्ष तक आपने अंग्रेजी के प्राध्यापक के रूप में आध्यापन कार्य किया| इसके बाद सन 1961 में भारतीय राजस्व सेवा पद के लिए चुने गए| 1991 में अवकाश प्राप्ति के बाद स्थायी तौर पर साहित्य के लिए लेखन कार्य करते रहे| 14 वर्ष की आयु से लिखने वाले मिश्र जी अपने युग की विसंगतियों के टूटने, संक्रमण और विघटन को अपने लेखन का आधार बनाया| जैसा कि हम देख सकते हैं यह समय स्वतंत्रता संग्राम और स्वतंत्रता प्राप्ति की घटनाओं से युक्त था उनके लेखन का हिस्सा कैसे नहीं बनता| लेखन कार्य तो इन्होंने काफी कम उम्र में शुरू कर दी थी लेकिन इस क्षेत्र में स्थायी तौर पर 1963 से लिखना प्रारम्भ किया| शुरू में तो इनकी कोई रचना नहीं छपी जिससे वे काफी हताश हुए थे|

सन 63 के बाद से आपने अपना लेखन कार्य जारी रखा जिसमें कहानी विधा से आपने श्री गणेश किया| उससे पहले आपके दो उपन्यास आ चुके थे| आपने कुल तेरह उपन्यास लिखा है-

'वह अपना चेहरा', 'उतरती हुई धूप', 'लाल पीली जमीन', 'हुजूर दरबार', 'तुम्हारी रोशनी मैं', 'धीरे-समीरे', 'पांच आंगनों वाला घर', 'फूल इमारतें और बन्दर', 'कोहरे में कैद रंग', 'धूल पौधों पर', 'अरण्य तंत्र', 'शाम की झिलमिल', और 'खिलाफत' आदि| मिश्र जी ने उपन्यासों के अतिरिक्त कहानियाँ, यात्रा-वृतांत, निबंध, बाल साहित्य एवं कविताओं का भी लेखन किया है| आपके बारह कहानी संग्रह है- 'नये पुराने माँ बाप', 'अन्तःपुर', 'रगड़ खाती आत्माएँ', 'धाँसू', 'अपाहिज', 'खुद के खिलाफ', 'खाक इतिहास', 'पगला बाबा', 'आसमान कितना नीला', 'हवाबाज', 'मुझे बाहर निकालो', 'नये सिरे से' आदि| 'ओ प्रकृति माँ' इनका एक-मात्र कविता संग्रह है| 'धुंध भरी सुर्खी', 'दरख्तों के पार....शाम', 'झूलती जड़े', 'परतों के बीच' आपके यात्रा-वृतांत है| 'साहित्य का सन्दर्भ', 'कथाभूमि', 'संवाद अनायास', 'समय और सृजन' आपके निबंध हैं| अतः 2004 ई. में प्रकाशित उपन्यास 'कोहरे में कैद रंग' को साहित्य सम्मान से नवाजा गया |

**कोहरे में कैद रंग (2008)**

सन 2008 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यह उपन्यास मूल्यों के प्रति मनुष्य मन की बची हुई आस्था को रेखांकित करता है| ऐसा कहा जा सकता है कि मिश्र जी की यह कृति आज के यांत्रिकता के प्रतिरोध की अमर गाथा है| अपनी रचना में लेखक मानवीय संवेदना को धार की तरह प्रयोग करते नजर आते हैं| यह उपन्यास अपनी रचनात्मकता और भाषा के लिए भी काफी सफल माना गया है| उपन्यास के सन्दर्भ में विश्वनाथ प्रसाद तिवारी लिखते हैं कि - "उपन्यास में सबसे ज्यादा आकृष्ट करता है भाव और भाषा का अनुशासन|"[46] उपन्यास में लेखक ने स्त्री-पुरुष के स्वभाव को जिस सहजता के साथ चित्रित किया है वो देखने योग्य है - "नर्मदा और भारतीय नारी में कितनी समानता है| नर्मदा ने शुरुआत में ही एक सीख ले ली, कपिलधारा बनते ही-जब-जब तुममें गन्दगी इकट्ठा हो जाए, पहाड़-पत्थरों पर खुद को साफ रख सकते हो| नर्मदा की यात्रा कैद से, निकलकर बहने, प्रपात बनकर गिरने, फिर बहने की है| जहाँ कूड़ा-कचरा, दिखावा-पाखण्ड, नोचना-खसोटना हुआ वहाँ उथली होकर ऊपर-ऊपर से निकल जाओ, जहाँ स्वच्छता

प्रेम पाओ वहाँ रम जाओ, गहरी हो जाओ धीरे-धीरे बहो....| सोन नद चतुर है, कुण्ड से निकलते ही भागने लगता है, ढलानों में इधर से, उधर से.....इतनी पतली धारा में कि दिखाई भी न दे.....और मुश्किल से सौ गज आगे जाकर नीचे कूद जाता है, कूदकर तिरोहित हो जाता है, फिर आसानी से पकड़ में नहीं आता| पुरुष है!"[47] उपन्यास में पात्रों के अलावा स्थानों को भी विशेष महत्त्व दिया गया है| साथ ही इसमें भारतीय ग्रामीण जीवन के यथार्थ रूप की भी सुन्दर चर्चा की गई है|

जाति, धर्म, वर्ग और परंपरा के कठोर बंधनों के कारण सरस्वती के प्रगाढ़ प्रेम को परिवार का समर्थन प्राप्त नहीं होता है| जिस कारण उसे अपने कोमल प्रेम की आहुति देनी पड़ती है| एक तरफ जहाँ स्वतंत्र भारत में लोग अपने देशीपन में सराबोर थे वहीं हमारे सरकारी हुकमरान अंग्रेजों जैसा दिखने बनने की कोशिश में लगे थे| सिद्ध कथाकार गोविन्द मिश्र जी ने अपनी इस नवीनतम रचना में दिखाया है कि आज की सभी विसंगतियों एवं आर्थिक दबाबों के भीतर जीने के लिए अभिशप्त मनुष्य में कहीं न कहीं आस्था शेष बची है| यही आस्था उनके जीवन को गरिमा प्रदान करती है और उसके जीवन को आज के समय में भी संतुलित करके रखती है| जब तक यह आस्था बनी हुई है मनुष्यता बची रहेगी|

**6. उदय प्रकाश**

1952 ई. में म.प्र. के सीतापुर गाँव में जन्में उदय प्रकाश एक चर्चित कवि, कथाकार, पत्रकार, और फिल्मकार हैं| विद्यार्थी जीवन में इन्हें एक बार कम्युनिस्ट पार्टी को समर्थन देने के जुर्म में सजा दी गयी थी अंतत इनकी राजनीति के प्रति रूचि नहीं रही है| साहित्य में शोध कार्य करने के बाद इन्होंने साहित्य विधा में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान अनेक रचनाओं के माध्यम से दिया| इनके कई कविता संग्रह हैं जो इस प्रकार हैं- 'सुनो कारीगर', 'अबूतर कबूतर', 'रात में हारमोनिया', 'एक भाषा हुआ करती है', 'कवि ने कहा' आदि| 'तिरिछ', 'दरियायी घोड़ा', 'और अंत में प्रार्थना', 'पाल गोमरा का स्कूटर', 'पीली छतरी वाली लड़की', 'दत्तात्रय का दुःख', 'मोहनदास', 'मैंगोसिस',

'अरेबा परेबा', 'दिल्ली की दीवार', राम सजीवन की प्रेमकथा' आपके कथा साहित्य में योगदान की एक लम्बी सूचि है| आपको आपकी कई रचनाओं के लिए समय-समय पर अनेक सम्मान दिए गए| भारत भूषण अग्रवाल, ओम प्रकाश सम्मान, श्रीकांत वर्मा सम्मान, मुक्तिबोध सम्मान, द्विजदेव सम्मान, पहल सम्मान, रूस का प्रतिष्ठित अन्तराष्ट्रीय पुश्किन सम्मान, कृष्णबलदेव वैद सम्मान, एवं 2006 में प्रकाशित उपन्यास 'मोहनदास' के लिए साहित्य अकादमी सम्मान|

**मोहनदास (2006)**

सन 2010 साहित्य अकादमी सम्मान से सम्मानित लघु उपन्यास 'मोहनदास' एक ऐसे युवा की कथा है जो आज के भौतिकवादी समाज में अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ता है| लेखक ने पात्रों का चयन उनके स्वभाव से जोड़कर किया है| मोहनदास को यहाँ सत्य और अहिंसा के प्रतीक द्वारा गाँधी जी से सीधा जोड़कर रखा गया है तो वहीं नागेन्द्रनाथ और उनके बेटे विश्वनाथ को हिंसा और असत्य का प्रतीक के रूप में दिखाया है| इन दोनों के आचरण को लेकर गाँव के लोग नागनाथ और विष नाथ कह कर भी बुलाते हैं| मोहनदास के साथ हो रहे अन्याय और अत्याचार दरअसल आधुनिक समय की वास्तविकता को अर्थात् गाँधी जी के खत्म होते मूल्यों की तरफ इशारा करता है| मोहनदास के जरिए लेखक आज के समय में सरकारी कार्यालयों में हो रहे भ्रष्टाचार को रेखांकित करता है| समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता और और आर्थिक ताकतों की दशा को भी लेखक ने यहाँ दर्शाया है| साथ ही नगर एवं महानगर में जातिगत विद्वेष की भावना को भी दिखाया है| इस उपन्यास में जिस गाँव को दिखाया गया है उसका नाम 'बिछिया' है जो बिच्छू के प्रतीकात्मक रूप को दिखाता है|

मोहनदास आज के समाज की एक ऐसी त्रासदी है जिसमें एक फर्स्ट क्लास ग्रेजुएट युवक अपने न होने की कसमें खा रहा है| अपने गाँव कस्बे एवं विश्वविद्यालय का सबसे होनहार विद्यार्थी होने के बाद भी वो सरकारी नौकरी से वंचित है| ऐसा इसलिए है क्योंकि वो आज के समय से अलग प्रवृत्ति का है अर्थात् एक सच्चा और ईमानदार इन्सान है| स्वभाव से मोहनदास

स्वाभिमानी, सीधा, संकोची और सच्चा इन्सान है| उसके पास किसी तरह कि सिफारिश या जोड़-तोड़ की, जालसाजी वगैरह की क्षमता नहीं थी जो उसकी सबसे बड़ी और पहली कमजोरी थी| उसने कभी भी किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण नहीं की यह उसकी दूसरी सबसे बड़ी कमजोरी थी| यही कारण था कि इतना कुछ आने के बाद भी मोहनदास को कोई नौकरी नहीं दे रहा था| उपन्यास के इस प्रसंग से इसे समझा जा सकता है - "मोहनदास हर जगह जाता| लिखित परीक्षा में सबसे ऊपर रहता लेकिन जब इंटरव्यू होता तब ख़ारिज कर दिया जाता| वह पाता कि उसकी जगह आठवीं दसवीं पास, थर्ड-सकेंड डिविजन बी.ए. वाले लड़के नौकरियों में ले लिए जाते| उनमें से हर किसी के पास कोई न कोई सिफारिश होती थी|"[48] पूरी योग्यता के बाद भी किसी को नौकरी न मिल पाना एक युवा के जीवन का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है| लेकिन जब किसी समाज में जाल साजी के तहत किसी के जीवन की पूंजी को अर्थात् किसी की कमाई गई डिग्रियों को कोई और अपने नाम करवा ले तो वैसा समाज मरा हुआ प्रतीत होता है| ऐसी ही घटना मोहनदास के जीवन में भी घटती है जिसमें अंततः मोहनदास नागदास के सामने हार मान जाता है और खुद को मोहनदास मानने से इनकार कर देता है| पूरे उपन्यास के माध्यम से लेखक यह कहना चाहते हैं कि - "अंग्रेजों द्वारा गुलाम भारत पर शासन के लिए तैयार किए गए नौकरशाह के इस जंग खाए लोह-ढाँचे ने, आजादी के साठ साल बाद, आधिकारिक सरकारी दस्तावेज पर, विश्वनाथ वल्द नागेन्द्रनाथ को मोहनदास बल्द काबा दास बना दिया गया|"[49] लेखक इन पंक्तियों के माध्यम से यह कहना चाह रहे हैं कि स्वतंत्रता के पश्चात् अंग्रेजों की नीति को बदला जाना जरूरी है|

कहा जाता है कि 'सत्य हताश जरूर होता है, लेकिन पराजित नहीं होता|' लेकिन मोहन दास आज के समय की एक ऐसी कड़वी और भयावह सच्चाई है जो न सिर्फ पराजित हुआ है बल्कि पूरे सभ्य समाज की बनी बनाई परिपाटी को एक सिरे से ख़ारिज करता है| कई तरह की विपदाओं से घिरा मोहन दास के जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी अपने होने का प्रमाण खो जाना था| मोहन दास के जीवन में विषम परिस्थितियों की कई बार बाढ़ आयी लेकिन हर बार वो जीवन के

मुहाने पर उम्मीद के कुछ दाने उगा ही लेता| मोहन दास कभी भी हारा नहीं हर तरह की चुनौतियों का सामना करने की ताकत वो शायद अपनी डिग्रियों से प्राप्त करता हो| लेकिन जब वो न सिर्फ छिनी बल्कि उसके होने पर ही अंकुश लगा दिया गया तब मोहन दास न सिर्फ टूटता है, बल्कि ताकतवरों के सामने आत्मसमर्पण कर देता है| यह कहकर कि वो मोहन दास नहीं है| किसी व्यक्ति के जीवन में जब उसे उसके प्रमाण पत्र की तरह अपनी ही जन्मभूमि पर अपने होने का प्रमाण छीन्न लिया जाये तो उससे वीभत्स किसी के जीवन में और क्या ही हो सकता है| पूरे उपन्यास में सच पागलों की तरह बेतहाशा भाग रहा है और झूठ उसके पीछे जिन्न की तरह हू...तु...तू...तू... करता हुआ दौड़ रहा है| यह उपन्यास नैतिकता और मूल्यों के मलबे पर खड़ा पशुओं के राज की कथा कहता है|

## 1.4 2011-2020 के मध्य पुरस्कृत हिंदी उपन्यास |

### 1. काशीनाथ सिंह

काशीनाथ सिंह जी का जन्म 1937 को बनारस के जीयनपुर गाँव के एक किसान परिवार में हुआ था| आपने अपनी आरंभिक शिक्षा गाँव के विद्यालय से प्राप्त की| बाद की शिक्षा में आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. (1959) और हजारी प्रसाद द्विवेदी के निर्देशन में 'हिंदी में संयुक्त क्रियाएँ' विषय पर शोध कार्य कर पीएच.डी. (1963) की उपाधि प्राप्त की| सन 1965 में इसी विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए और पदोन्नति के बाद प्रोफेसर बन 1997 में सेवानिवृत हुए| पिता स्कूल में अध्यापक थे| आपके बड़े भाई नामवर सिंह जी थे| इनका विवाह शमशेर बहादुर सिंह जी की बेटी कुसुम के साथ हुआ| आपके लेखक बनने का श्रेय कहीं-न-कहीं आपके आस-पास के साहित्यिक वातावरण को जाता है| आपके साहित्य में गाँव की महक आपके जीवनानुभव को जाता है| आपने साहित्य के विभिन्न विधाओं में लेखन कार्य किया है| आपकी पहली कहानी जो अप्रकाशित है अपने गाँव की ढोला कहारिन पर लिखी थी| आपकी पहली प्रकाशित रचना 'हिंदी कहानी के साठ वर्ष' आलेख है| आपकी पहली प्रकाशित कहानी 'जोतसी ने कहा था' 1962 में कल्पना पत्रिका में छपी थी| 'लोग बिस्तरों पर', 'सुबह का डर', 'आदमीनामा', 'नयी तारीख', 'कल की फटेहाल कहानियाँ', 'सदी का सबसे बड़ा आदमी', 'प्रतिनिधि कहानियाँ', 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ', 'कहानी उपखान', 'पत्ता-पत्ता बूटा-बूटा' आदि आपके कहानी संग्रह है| आपने कुल पांच उपन्यास लिखे हैं| आपका पहला उपन्यास सन 1972 में 'अपना मोर्चा' नाम से प्रकाशित हुआ| 'काशी का अस्सी', 'रेहन पर रग्घू', 'महुआचरित', 'उपसंहार' आदि आपके अन्य चार उपन्यास है| 'याद हो कि न याद हो' आछे दिन पाछे गए', 'घर का जोगी जोगड़ा' आपके संस्मरण हैं| 'घोआस' नाम से आपका एक नाटक भी है|

**रेहन पर रग्घू (2011)**

सन 2011 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यह उपन्यास वस्तुतः गाँव, शहर, अमेरिका तक के भूगोल में फैला हुआ अकेले और निहत्थे पड़ते जा रहे समकालीन मनुष्य का बेजोड़ आख्यान है| 2008 ई. में प्रकाशित यह आपका तीसरा उपन्यास है| आरम्भ में ही उपन्यास के साथ अपने लगाव और स्नेह को लेखक ने कुछ इस तरह बताया है - "अगर काशी का अस्सी मेरा नगर था तो 'रेहन पर रग्घू' मेरा घर है- और शायद आप का भी|"[50] उपन्यास में 71 वर्षीय रघुनाथ उस मध्यम वर्ग का प्रतीक है जिसकी जिन्दगी उस छोटी सी जगह पहाड़पुर के डिग्री कॉलेज के अध्यापक तक सीमित है| उपन्यास में पहाड़पुर के प्रेम के साथ-साथ ग्रामीण राजनीति, रिश्तों में अर्थ की महत्त्वपूर्ण भूमिका तथा सारी सुख सुविधाओं के बाद भी व्यक्ति के अकेलेपन को सफलतापूर्वक दिखाया है| रघुनाथ के तीन बच्चे दो बेटा और एक बेटी है| बड़ा बेटा संजय साफ्टवेयर इंजीनियर बनकर विदेश चला जाता है और बेटी सरला नौकरी करने के बाद शादी नहीं करती| छोटा बेटा धनंजय एम.बी.ए. के नाम पर पैसे बर्बाद करता है| सभी अपने-अपने हिसाब का जीवन जीते हैं जो रघुनाथ के लिए असहनीय होता है| जब रघुनाथ को अपने बच्चों की सबसे ज्यादा जरुरत होती है तो वह उनमें से एक को भी उसके साथ खड़ा नहीं पता है| वो सोचता है - "एक भी यहाँ नहीं जो बाप के बगल में खड़ा होता! रघुनाथ ने जिन अंडो को से कर बड़ा किया था, वे कोयल के नहीं कौवे के थे|"[51]

यह उपन्यास लेखक की रचना का नया शिखर है| भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप संवेदना, संबंध और सामूहिकता की दुनिया में जो निर्मम ध्वंस हुआ है तब्दीलियों का जो तूफ़ान निर्मित हुआ है उसका प्रमाणिक और गहन अंकन है यह 'रेहन पर रग्घू'| उपन्यास में केन्द्रीय पात्र रघुनाथ की नजरों में उसकी जिन्दगी व्यवस्थित और सफल थी, जब तक कि सबकुछ उनकी योजना और इच्छा के मुताबिक हो रहा रहा था| अचानक कुछ ऐसा घटित होता कि उनके जीवन का अर्जित यथार्थ इतना महत्त्वाकांक्षी, आक्रामक, हिंसक हो जाता है कि मनुष्यता की तमाम आत्मीय कोमल

अच्छी चीजें टूटने, बिखरने और बरबाद होने लगती हैं| अखिलेश के शब्दों में - "रेहन पर रग्घू' नए युग की वास्तविकता की बहुस्तरीय गाथा है| इसमें उपभोक्तावाद की क्रूरताओं का विखंडन है ही, साथ में शोषित-प्रताड़ित जातियों के सकारात्मक उभार और नई स्त्री की शक्ति एवं व्यथा का दक्ष चित्रांकन भी है| दरअसल रेहन पर रग्घू में वास्तविकताओं, चरित्रों, लोकेल, उपकथाओं आदि का ऐसा सधा हुआ अकाट्य अन्तर्गुम्फन है कि उसे एक प्रौढ़ रचनात्मकता के रूप में दर्ज किया जाना चाहिए| देशज सच्चाइयों, कल्पना, काव्यात्मकता, झीनी दार्शनिकता का सहमेल उपन्यास को मूल्यवान आभा से समृद्ध बनाता है|"[52] लेखक ने उपन्यास में मध्यम वर्ग की पीड़ा को बारीकी से व्यक्त किया है| अतः संबंधों में मधुरता का ह्रास, अकेलापन, नयी पीढ़ी की धन लोलुपता तथा संस्कारों का निरंतर ह्रास इस उपन्यास की मुख्य समस्या है|

**2. मृदुला गर्ग**

मुर्द्धन्र्य साहित्यकार मृदुला गर्ग जी का जन्म 25 अक्टूबर 1938 में कलकत्ता के एक संपन्न परिवार में हुआ था| बचपन में शारीरिक अस्वस्थता के कारण मृदुला जी की प्रारंभिक शिक्षा काफी प्रभावित हुई इसके बावजूद भी उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की| दिल्ली में 'लेडिज इरविन स्कूल' से आपने स्कूली शिक्षा ग्रहण की| इसके बाद आपने 'मिरांडा हॉउस' कॉलेज से बी.ए. अर्थशास्त्र में किया और एम.ए. अर्थशास्त्र की पढ़ाई 'दिल्ली स्कूल ऑफ इकॉनामिक्स' से किया| 1960 से 1963 ई. तक बतौर आजीविका आप इन्द्रप्रस्थ कॉलेज और जानकी देवी कॉलेजों में कार्यरत रहीं| विवाह के बाद आपने अपने पति आनंद प्रकाश गर्ग के साथ रहने का निर्णय लिया| दिल्ली छोड़ने के बाद आप अपने पति के साथ कई राज्यों में रहीं जिसका जिक्र आपने अपने उपन्यास 'मिलजुल मन' में भी किया है| आपने अपने जीवन में परिवार को प्रथम प्राथमिकता दिया है| आपने अपने जीवन में कुछ ऐसे दुखद क्षण भी देखा हैं जो बेहद दर्दनाक थे| 'चित्तकोबरा' को लेकर भी आपने कई तरह की मानसिक और शारीरिक यातना झेलीं हैं| 'चित्तकोबरा' को आपके जीवन के संघर्ष का प्रमाण के तौर पर देखा जा सकता है| इस उपन्यास को लेकर उनके ऊपर लगाये गए आरोपों से

वो जितनी आहत थी उससे ज्यादा पुलिस की करवाई से दुखी भी| इस घटना के बारे में मृदुला जी अपने साक्षात्कार में कहती हैं कि - "जब गिरफ्तारी करवाई गई तब मैं केवल बयालीस वर्ष की थी, मेरे छोटे-छोटे बच्चे थे और मेरे ससुर गंभीर स्थिति में अस्पताल के इंटेसिव केयर में दाखिल थे| चार दिन बाद उनकी मृत्यु हो गयी| इन सबसे ज्यादा मुझे जिस बात का दुःख है, वह है मेरे साहित्यिक कृतियों का सही मूल्यांकन न होने देना|"[53] ऐसी कई विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुए आज मृदुला गर्ग आधुनिक हिंदी साहित्य के क्षेत्र में अपना एक विशेष स्थान बनाती हैं| आपकी रचना प्रक्रिया इस प्रकार है -

**उपन्यास**

. 'उसके हिस्से की धूप'(1975)

. 'वंशज'(1976)

. 'चित्तकोबरा'(1979)

. 'अनित्य'(1980)

. 'मैं और मैं'(1984)

. 'कठगुलाब'(1996)

. 'मिलजुल मन'(2009)

**कहानी संग्रह**

. 'कितनी कैदें'(1975)

. 'टुकड़ा-टुकड़ा आदमी'(1977)

. 'डेफोडिल जल रहे हैं'(1978)

. 'ग्लेशियर से'(1980)

. 'उर्फ सेम'(1982)

. 'दुनिया का कायदा'(1983)

. 'शहर के नाम'(1990)

. ‘समागम’(1996)

. ‘मेरी देश की मिट्टी, अहा’(2001)

. ‘जूते का जोड़ गोभी का तोड़’(2006)

. ‘स्त्री मन की कहानियाँ’(2010)

. ‘वो दूसरी’(2014)

. ‘हर हाल बेगाने’(2014)

**नाटक**

. ‘एक और अजनबी’(1978)

. ‘जादू का कालीन’(1993)

. ‘तीन कैदें’(1996)

. ‘साम दाम दंड भेद’(2003)

**निबंध/ लेख संग्रह/ व्यंग लेख**

. ‘रंग-ढंग’(1995)

. ‘चुकते नहीं सवाल’(1999)

. ‘कर लेंगे सब हजम’(2007)

. ‘खेद नहीं है’(2010)

**संस्मरण**

. ‘दीदी की याद में’(1998)

. ‘एक महा आख्यान लघु उपन्यास सा निबट गया’(1998)

. ‘कुछ अटके कुछ भटके’(यात्रा-संस्मरण)-(2006)

. ‘कृति और कृतिकार’(स्मृति-लेख)-(2013)

**पुरस्कार**

. 'कितनी कैदें' कहानी के लिए कहानी पत्रिका द्वारा 1972 में सर्वश्रेष्ठ कहानी पुरस्कार|

. 'उसके हिस्से की धूप' उपन्यास को म.प्र. साहित्य परिषद् द्वारा 1975 में 'वीर सिंह देव' पुरस्कार|

. 'एक और अजनबी' नाटक को आकाशवाणी की तरफ से पुरस्कार|

. 'जादू का कालीन' के लिए म.प्र. साहित्य परिषद् द्वारा सेठ गोविन्ददास पुरस्कार|

. 'मिलजुल मन' के लिए 2013 में साहित्य अकादमी पुरस्कार|

**मिलजुल मन (2013)**

सन 2009 में प्रकाशित 'मिलजुल मन' आपका सातवाँ उपन्यास है| स्वतंत्रता के ठीक बाद के सामाजिक यथार्थ को लेकर लिखा गया यह आपका आत्मकथात्मक उपन्यास है| आपकी कल्पनाशक्ति में आपके अनुभव को विशेष रूप दिया गया है| इसमें मोगरा जो स्वयं लेखिका है और उनकी बहन गुलमोहर मंजुल जी हैं| इसके अतिरिक्त सभी पात्र अपने वास्तविक जीवन से ही लिए हैं| उपन्यास जिस समय की कथा हैं उस समय में उर्दू का चलन हुआ करता था, जिस कारण उपन्यास में उर्दू के प्रयोग की सघनता को भी देखा गया है| अपने समय को वापस जीने की कोशिश में लेखिका ने अनुभव की पुरानी स्मृतियों को पीछे कहीं दबे से मस्तिष्क से निकालकर एक सुंदर रूप देने का सफल प्रयास किया है| उपन्यास में एक कहानी का सिरा दूसरे से, दूसरे का तीसरे से अतः यह कई कहानियों का आपस में मिला जुला एक संग्रह लगता है| कई बार कहानी कहने के क्रम में मोगरा को टोका भी जाता है कि अभी तो तुम किसी और के बारे में बता रही थी अचानक कहाँ पहुँच गयी| अतः इस सन्दर्भ में 'मिलजुल मन' को स्पष्ट करते हुए वे कहती हैं कि - "क्या करूँ मेरी कहानी ऐसी ही है, सब में गुथी हुई|"[54]1952 ई. से शुरू होती सामाजिक पृष्ठभूमि का कलेवर पारिवारिक माहौल को समय के सापेक्ष गति प्रदान करता है| इस उपन्यास के उद्देश्य को लेकर मृदुला जी लिखतीं हैं- "मैंने जो देखा, जिया, भोगा, अनुभव किया वही लिखा|..... मैं बस इतना ही कहना चाहती हूँ कि फ़साने और हक़ीकत के मिलेजुले रूप वाले इस उपन्यास का मूल तत्व विद्रूप है|"[55]

**3. रमेशचन्द्र शाह**

हिंदी साहित्य को नयी दिशा प्रदान करने वाले महान रचनाकार रमेशचन्द्र शाह का जन्म अल्मोड़ा(उत्तराखंड) में सन 1937 में वैशाख त्रयोदशी को हुआ| आपने इंटरमीडिएट तक की शिक्षा राजकीय इंटर कॉलेज अल्मोड़ा से प्राप्त की| इसके बाद आपने आगे की पढ़ाई इलाहबाद विश्वविद्यालय से बी.एस.सी. और आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए. अंग्रेजी साहित्य में किया| इसके बाद आपने भोपाल विश्वविद्यालय से 'येट्स एंड इलियट पर्सपेक्टिव्ज़ ऑन इंडिया' विषय से पीएच.डी. की उपाधि ग्रहण किया| सांस्कृतिक और प्राकृतिक सघन और कोमल वातावरण में रहने और साहित्य के प्रति रूचि होने के कारण आपने बचपन में ही लिखना शुरू कर दिया था| साहित्य की काव्य विधा से आपने अपना लेखन कार्य शुरू किया| जीविका के लिए कई कॉलेजों में आपने अध्यापन का कार्य किया| साहित्य लेखन और अध्यापन दोनों का आपके जीवन में विशेष स्थान रहा है| आपके लेखन की लम्बी सूची से साहित्य के प्रति आपके समर्पण को देखा जा सकता है| आपकी पहली कविता 1952 में 'देवदारु शक्ति' साप्ताहिक में प्रकाशित हुई| 'कछुए की पीठ पर', 'हरिश्चंद्र आओ', 'नदी भागती आई', 'प्यारे मुचकुन्द को', 'चाक पर समय' तथा 'देखते हैं शब्द भी अपना समय' आपके काव्य संग्रह हैं| 'गोबर गणेश', 'किस्सा गुलाम' 'पूर्वापर', 'आखिरी दिन', 'पुनर्वास', 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू', 'असबाब-ए-विरानी' 'सफेद पर्दे पर', 'कमबख्त इस मोड़ पर', 'विनायक', 'कथा सनातन' आपके उपन्यास हैं| 'रचना के बदल', 'आड़ू का पेड़', 'पढ़ते-पढ़ते', 'स्वधर्म और कालगति', 'स्वाधीन इस देश में', 'हिंदी की दुनिया में', 'देहरी की बात', 'अगुन-शगुन बिच', एवं 'नेपथ्य' आपके निबंध संग्रह हैं| 'मारा जाई खुसरो' आपका नाटक| 'जंगल में आग', 'मानपत्र', 'मुहल्ले का रावण', थिएटर 'मेरी प्रतिनिधि कहानियां' आदि आपके कहानी संग्रह हैं| अकेला मेला और इस खिड़की से आपकी आपकी डायरी है| 'एक लंबी छाँह' आपका यात्रा वृतांत| आपने ऐसी और अनेकों रचनाएँ लिखी है, जो साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण योगदान की तरह है|

**विनायक (2014)**

'विनायक' एक ऐसा उपन्यास है जिसे 'गोबरगणेश' के नायक की उत्तरकथा की तरह भी पढ़ा जा सकता है, और अपने-आप में स्वतंत्र रचना की तरह भी| इसे उपन्यास के एक प्रसंग से समझ सकते हैं - "माइ डियर बीनू, उर्फ़ विनायक उर्फ़ गोबरगणेश!"[56] अंतर्बाह्य सनसनी से भरपूर यह उपन्यास अपने ढंग से अपने ही शर्तों पर जीवन के अर्थ की तलाश है| पात्र 'विनायक', पत्नी 'मालती' और शकुंतला के माध्यम से कथा गति पाता है| विनायक भाषा विभाग में प्राध्यापक है और तर्क करना उनकी प्रवृत्ति| इन्होंने अपने जीवन में भाव से अधिक बुद्धि को महत्त्व दिया है| इस उपन्यास में प्रगति भाव दाम्पत्य जीवन के बीच तनाव का कारण है - "जीवन क्या किसी का भी, महज सीधी लकीर नहीं, एक वृत्त, बल्कि वर्तुल है जो 'अंत' को आरम्भ से मिला के ही पूरा होता है?"[57] उपन्यास का आरम्भ खुशबू से होता है और अंत स्वयं इस चरितनायक को उसके रचयिता के सीधे संबोधन और प्रतिस्मृति से|

**4. नासिरा शर्मा**

नासिरा शर्मा जी जन्म एक संपन्न सिया मुस्लिम परिवार में 22 अगस्त 1948 को इलाहबाद में हुआ| उस समय इलाहबाद साहित्यिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्रों में से एक हुआ करता था| इनका परिवार शिक्षित और संपन्न था| पिता उर्दू के प्रोफ़ेसर और प्रगतिशील विचरकों के कवि थे| निश्चित ही नासिरा शर्मा के साहित्यिक धरोहर इन्हें विरासत में मिली| आरंभिक शिक्षा आपकी घर से हुई| बाद में दिल्ली आकर आपने उच्च शिक्षा ग्रहण की| ईरान आपके साहित्यिक शोध का विषय रहा है| हिंदी, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी और पश्तो भाषा पर आपका खासा अधिकार रहा है| आपने परंपरागत मान्यताओं का विरोध कर धार्मिक कर्मकांड से बचते हुए डॉ. रामचंद्र शर्मा के साथ 'स्पेशल मैरेज एक्ट' के तहत अंतर्धर्मीय प्रेम विवाह कर संविधान और कानून द्वारा वैवाहिक जीवन में कदम रखा| अपने विवाह के विषय में वे खुद लिखतीं हैं - "डॉ. शर्मा की शादी के इच्छुक पिता वर्षों तक कोशिश करते रहे| राजस्थान के कई घराने दहेज़ में मकान, कर देने को तैयार थे|

ये सारे कटाक्ष, ताने, कुढ़न हमारे रिश्ते पर कभी न हावी हुए न धर्म, घर, परिवार, वर्ग, प्रान्त, हमारे बीच कटुता के बीज बो पाए|"[58]

आधुनिक युग में जिन महिला कहानीकारों ने हिंदी कथा साहित्य में अपनी पहचान बनाई उनमें नासिर जी का नाम अग्रणी है| रुग्न मान्यताओं के प्रति विद्रोह, स्वस्थ आधुनिक दृष्टिकोण, नष्ट होते पारंपरिक मूल्यों की स्थापना और नारी जागरण आपके साहित्य की मुख्य विशेषता रही हैं| इसलिए भी आप विशिष्ट हैं कि लेखिका होते हुए भी नारीवादी नहीं है| इस सन्दर्भ में उनका मत है कि -"गलत समझे जाने का खतरा उठाकर भी मैं फिर कहना चाहूंगी कि मैं स्त्रीवादी नहीं हूँ| न ही स्त्रियाँ मेरे लेखन के केंद्र में रही हैं| ऐसा इसलिए है, क्योंकि मुझे नहीं लगता कि स्त्री की समस्या उनका रूप कुछ भी हो, सिर्फ स्त्री की समस्याएँ है| वे सीधे-सीधे हमारी समूची सामाजिक व्यवस्था से जुडी हुई हैं और उन्हें सीमित दायरे में देखने की जगह व्यापक सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए|"[59] साहित्य जगत में नासिरा जी कहानी के द्वारा प्रवेश करती हैं| आपने अपने कहानियों में विविध समस्याओं को उजागर किया है| आपके अबतक नौ **कहानी संग्रह** हैं जो इस प्रकार हैं-

. 'पत्थर गली',

. 'इब्ने मरियम',

. 'शामी कागज',

. 'सबीना के चालीस चोर',

. 'खुदा की वापसी',

. इंसानी नस्ल',

. 'शीर्ष कहानियां',

. 'दूसरा ताजमहल',

. 'संगसार', तथा

. 'गूंगा आसमान' आदि|

**उपन्यास**

. 'सात नदियाँ : एक समुन्दर'

. 'शाल्मली'

. 'ठीकरे की मँगनी'

. 'जिन्दा मुहावरे'

. 'अक्षय वट'

. 'कुइयाँजान'

. 'जीरो रोड'

. 'पारिजात'

. 'अजनबी जजीरा'

. 'कागज की नाव'

. 'शब्द पखेरू'

. 'दूसरी जन्नत'

**अनुवाद**

. 'किस्सा जाम का' (ईरान के कवि, कथाकार श्री मोहसिन की लोकथाओं का)

. 'प्रेम कथा'

. 'शाहनामा फिरदौसी'

. 'गुलिस्तान-ए-सादी'

. 'काली छोटी मछली'

. 'अदब में बायीं पसली'

**संपादित ग्रन्थ**

. 'इकोज ऑफ ईरानियन रिवोल्यूशन : प्रोटेस्ट पोयटरी'

. 'क्षितिज पार'

. 'सारिका' (पत्रिका)

**लेख संग्रह**

. 'राष्ट्र और मुसलमान'

. 'औरत के लिए औरत'

. 'वो एक कुमारबाज़ थी'

**रिपोर्ताज**

. 'जहाँ फव्वारे लहू रोते हैं'

**संस्मरण**

. 'यादों का गलयारा'

**पारिजात (2016)**

वर्ष 2016 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित उपन्यास 'पारिजात' मानव जीवन की गाथा है| जिसमें इतिहास, वर्तमान, और भविष्य तीनों है| उपन्यास में जितना गंगा-जमुनी तहजीब को दिखाया है उतना ही आधुनिकता की ऊष्मा को भी| यह उपन्यास रोहन और रूही के जीवन से जुड़े उन तमाम लोगों के द्वारा जीवन को समझने का एक सुन्दर प्रयास है| यहाँ 'पारिजात' सिर्फ एक फूल नहीं बल्कि मानव संस्कृति एवं रिश्तों की दास्तान है| 'पारिजात' के सन्दर्भ में आवरण पृष्ठ पर लिखा गया है - "पारिजात केवल एक वृक्ष, कथा और विश्वास मात्र नहीं है, बल्कि यथार्थ की धरती पर लिखी एक ऐसी तमन्ना है, जो रोहन के खून में रेशा-रेशा बनकर उतरी है और रूही के श्वासों में घुल गई है|"[60]

**5. चित्रा मुद्गल**

चित्रा मुद्गल बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न रचनाकार हैं| इनकी रचनाओं में भोगे हुए यथार्थ को सही अभिव्यक्ति मिली है| अपनी रचनाओं में आपने ऐसे अनेक विषयों पर खुलकर लिखा जिसपर आमतौर से लेखिकाएँ रूचि नहीं लेती हैं| स्वाधीनता प्राप्ति के बाद नारी के जीवन में जो मूल्यगत परिवर्तन हुए हैं उसकी चर्चा आप अपने लेखन में करती हैं| चित्रा जी का जन्म 1944 को चेन्नई में हुआ था| आज की व्यावसायिक उपभोगवादी संस्कृति में नारी के शोषण की नयी-नयी स्थितियाँ उभरने लगी है| चित्रा मुद्गल ने विज्ञापन जगत में होने वाले नारी-शोषण को सार्थक औपन्यासिक परिणति देकर एक सफल लेखन के रूप में अपने को स्थापित किया है| चित्रा मुद्गल उन कहानीकारों में अग्रणी हैं, जिन्होंने स्त्री-पुरुष संबंधों के दायरों से बहार निकल कर महानगरों में संघर्षरत नौकरीपेशा नारियों एवं झोपड़पट्टीयों में घिसटते हुए निम्नवर्गीय लोगों के जीवन में झाँक कर देखा है| आपने अपनी कहानियों को लेकर कहा है कि आपकी कहानियाँ - "मनुष्यता और जिन्दगी के बीच की कहानियाँ हैं|"[61] आपका रचना संसार आगे निम्नलिखित है-

**कहानी**

. 'जहर ठहरा हुआ'

. 'लाक्षाग्रह'

. 'अपनी वापसी'

. 'इस हमाम में'

. 'जगदम्बा बाबू गाँव आ रहे है'

. 'जिनावर'

. 'भूख'

. 'लपटें'

. 'पेंटिंग अकेली है'

**उपन्यास**

. 'एक जमीन अपनी'

. 'आवां'

. 'गिलिगडु'

. 'पोस्ट बॉक्स न. 203 नाला सोपारा'

**पोस्ट बॉक्स नं. 203-नाला सोपारा (2018)**

यह 2016 ई. में प्रकाशित चित्रा मुद्गल का चौथा उपन्यास है, जिसे सन 2018 में साहित्य अकादमी सम्मान से सम्मानित किया गया| यह उपन्यास विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली के बहाने हमारे समाज में लम्बे समय से चली आ रही उस मानसिकता का विरोध करती है जो मनुष्य को मनुष्य समझने से बचती रही है| यह उपन्यास महज शारीरिक कमी के चलते किसी इन्सान को असामाजिक बना देने की क्रूर विडम्बना पर आधारित कथा है| पत्रात्मक शैली में लिखा गया यह उपन्यास लिंग से इतर समाज के निर्माण की बात करता है|

**सन्दर्भ सूची -**


1. http://sahitya-akademi.gov.in

2. जैनेन्द्र कुमार, साहित्य का श्रेय और प्रेय, पृष्ठ-20

3. रामचंद्र तिवारी, हिंदी का गद्य साहित्य, पृष्ठ-1090

4. अमृतलाल नागर, अमृत और विष, पृष्ठ-400

5. रामचंद्र तिवारी, हिंदी का गद्य साहित्य, पृष्ठ-1097

6. श्रीलाल शुक्ल, यह घर मेरा नहीं, पृष्ठ-113

7. श्रीलाल शुक्ल, अगली शताब्दी का शहर, पृष्ठ-72

8. श्रीलाल शुक्ल, यहाँ से वहाँ, पृष्ठ-भूमिका से

9. ममता कालिया, श्रीलाल शुक्ल की दुनिया (सीमाओं को सामर्थ्य बना लेने की कला), पृष्ठ-125

10. श्रीलाल शुक्ल, राग दरबारी, पृष्ठ-7

11. राजेश्वर सक्सेना, सहनी : व्यक्ति और रचना, पृष्ठ-11

12. भीष्म साहनी, तमस, पृष्ठ-आवरण

13. वही, पृष्ठ-35-36

14. सं. भीष्म साहनी, आधुनिक हिंदी उपन्यास, पृष्ठ-430

15. प्रकाशचंद मिश्र, यशपाल का कथा साहित्य, पृष्ठ-109

16. यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृष्ठ-24

17. वही, पृष्ठ-25

18. कृष्णा सोबती, सोबती एक सोहबत, पृष्ठ-407

19. वही, पृष्ठ-374

20. कृष्णा सोबती, जिंदगीनामा, पृष्ठ- 9

21. कृष्णा सोबती, सोबती एक सोहबत, पृष्ठ-376

22. शिवप्रसाद सिंह, नीला चाँद, पृष्ठ-भूमिका से

23. वही, पृष्ठ-आवरण

24. गिरिराज किशोर, ढ़ाई घर, पृष्ठ-7

25. वही, पृष्ठ-9

26. वही, पृष्ठ-37

27. वही, पृष्ठ-119

28. वही, पृष्ठ-348

29. विष्णु प्रभाकर, पंखहीन(आत्मकथा), पृष्ठ-118

30. वही, पृष्ठ-125

31. रामचंद्र तिवारी, हिंदी का गद्य साहित्य, पृष्ठ-1050

32. वही, पृष्ठ-310

33. अरविन्द त्रिपाठी, प्रतिनिधि कविताएँ, पृष्ठ-24

34. विनोद कुमार शुक्ल, दीवार में खिड़की रहती थी, पृष्ठ-168

35. वही, पृष्ठ-168

36. कमलेश्वर, कितने पाकिस्तान, पृष्ठ-मुख्य पृष्ठ से

37. वही, पृष्ठ-218

38. वही, पृष्ठ-भूमिका से

39. वही, पृष्ठ-आवरण से

40. प्रेम कुमार, नया ज्ञानोदय, पृष्ठ-26

41. मनोहर श्याम जोशी, क्याप, पृष्ठ-32

42. वही, पृष्ठ-51

43. वही, पृष्ठ-आवरण से

44. अमरकांत, इन्हीं हथियारों से, पृष्ठ-5

45. वही, पृष्ठ-आवरण

46. गोविन्द मिश्र, कोहरे में कैद रंग, पृष्ठ-आवरण

47. वही, पृष्ठ-6

48. उदय प्रकाश, मोहनदास, पृष्ठ-13

49. वही, पृष्ठ-70

50. काशीनाथ सिंह, रेहन पर रग्घू, पृष्ठ-7

51. वही, पृष्ठ-82

52. वही, पृष्ठ-आवरण

53. मृदुला गर्ग, चित्तकोबरा, पृष्ठ-167

54. मृदुला गर्ग, मिलजुल मन, पृष्ठ-59

55. मृदुला गर्ग, मेरे साक्षात्कार, पृष्ठ-152

56. रमेशचन्द्र शाह, विनायक, पृष्ठ-16

57. वही, पृष्ठ-आवरण से

58. नासिरा शर्मा, राष्ट्र और मुसलमान, पृष्ठ-(173-74)

59. वही, पृष्ठ-189

60. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-आवरण से

61. चित्रा मुद्गल, समकालीन कथा लेखिकाएँ, पृष्ठ-267